શ્રી સ્વામિનારાયણો વિજયતેતરામ્

શિવપુરાણ

3

www.neelkanthvarni.com

श्रृणु नारद वक्ष्यामि संक्षेपाल्लिंगपूजनम् ।
वक्तुं वर्षशतेनापि न शक्यं विस्तरान्मुने ।१०
एवं तु शांकरं रूपं सुखं स्वच्छ सनातनम् ।
पूजयेत्परया भक्त्या सर्वकामफलाप्तये ।११
दारिद्रयं रोगदुःखं च पीडनं शत्रुसम्भवम् ।
पापं चतुर्विध तावद्या बन्नाचयते शिवम् ।१२
सम्पूजिते शिवे देवे सर्वदुःखं विलीयते ।
सम्पद्यते सुखं सर्वं पश्चान्मुक्तिरवाप्यते ।१३
ये वै मानुष्यमाश्रित्य मुख्यं सनातनः सुखम् ।
तेन पूज्यो महादेवः सर्वकार्यार्थसाधकः ।१४
ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः शूद्राश्च विधिवत्क्रमात् ।
शङ्करार्चा प्रकुर्वन्तु सर्वकामार्थसिद्धये ।१५

उपमन्यु ने वह सब श्री कृष्ण को सुनाया था, जैसे ब्रह्माजी ने कहा था, वैसे ही मैं तुमसे कहता हूँ ।९। ब्रह्माजी ने कहा—हे नारदजी ! मैं संक्षेप में लिंग-पूजा की विधि कहता हूँ, इसे विस्तार पूर्वक तो सौ वर्ष में भी नहीं कहा जा सकता ।१०। इस प्रकार शिवजी का स्वरूप सुखदायक एवं सनातन है। सम्पूर्ण कामनाओं की प्राप्ति के लिये उनका परम भक्तिपूर्वक पूजन करे ।११। दारिद्रय, रोग, दुःख तथा शत्रु की पीड़ा यह चार प्रकार के संकट तभी रहते हैं, जब तक कि शंकर की पूजा नहीं की जाती ।१२। भगवान का पूजन करने से सभी दुःखों का लोप हो जाता है और सर्व सुख की प्राप्ति होकर अन्त में मोक्ष मिलती है ।१३। मनुष्य जन्म में सन्तान का ही मुख्य सुख है, इसकी प्राप्ति के हेतु सर्वार्थ-साधक भगवान् शिवजी का पूजन करे ।१४। सम्पूर्ण कामनाओं की सिद्धि के लिए चारों वर्णों को क्रमशः शिवार्चन करना चाहिये ।१५।

प्रातःकाले समुत्थाय मुहूर्ते ब्रह्मसंज्ञके ।
गुरोश्च स्मरणं कृत्वा शंभोश्चव तथा पुनः ।१६
तीर्थानां स्मरणं कृत्वा ध्यानं चैव हरेरपि ।
ममापि गिर्जराणां वै मुन्यादीनां तथा मुने ।१७

ततः स्तोत्रं शंभुनाम गृह्णीयाद्विधिपूर्वकम् ।
तथोत्थाय मलोत्सर्गं दक्षिणस्यां चरेद्दिशि ।।१८
एकान्ते तु विधिं कुर्यान्मलोत्सर्गस्य तच्छ्रुतम् ।
तदेव कथयाम्यद्य श्रृण्वाधाम मनो मुने ।।१९
शुद्धां मृद द्विजो लिप्यात्पंचवारं विशुद्धये ।
क्षत्रियश्च चतुर्वारं वैश्यो वारत्रयं तथा ।।२०
शूद्रो द्विवारं च मृदं गृह्णीयाद्विधिशुद्धये ।
गुदे वाथ सकृल्लिंगे वारमेकं प्रयत्नतः ।।२१

प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त में उठे और गुरु तथा शिवजी का स्मरण करे ।।१६।। फिर तीर्थों का स्मरण और शंकर का ध्यान करके मेरा स्मरण करे और फिर देवताओं और मुनियों का ध्यान करे ।।१७।। शिवनाम के स्तोत्र का विधिवत् जप करे और फिर उठकर दक्षिण दिशा में जाकर मल त्याग करे ।।१८।। शास्त्रानुसार मलोत्सर्ग एकान्त में करे । हे मुने ! उसकी विधि आपसे कहता हूँ, ध्यान से सुनो ।१९। शुद्धि के लिए ब्राह्मण को मृत्तिका से पाँच बार हाथ धोने चाहिए, क्षत्रिय चार बार तथा वैश्य तीन बार हाथ धोवे ।।२०।। शूद्र दो बार मिट्टी से हाथ धोवे, गुदा और लिंग में भी एक बार मिट्टी लगावे ।।२१।।

दशावारं वामहस्ते सप्तवारं द्वयोस्तथा ।
प्रत्येकम्पादयोस्तात त्रिवारं कारयोः पुनः ।।२२
स्त्रीभिश्च शूद्रवत्कार्यं मृदाग्रहणमुत्तमम् ।
हस्तौ पादौ च प्रक्षाल्य पूर्ववन्मृदमापरेत् ।।२३
दंतकाष्ठं ततः कुर्यात्स्ववर्णक्रमओ नरः ।।२४
विप्रः कुर्याद्दंतकाष्टं द्वादशांगुलमानतः ।
एकादशांगुलं राजा वश्यः कुर्याद्दशांगुलम् ।।२५
शूद्रोनवांगुलं कुर्यादिति मानमिदं स्मृतम् ।
कालदोषं विचार्य्यैव मनुदृष्टं विबजयेत् ।।२६
षष्ठ्याद्यामाश्च मवमी व्रतमस्तं रवेर्दिनम् ।
तथा श्राद्धदिनं तात निषिद्धं रदधावने ।।२७

स्नानं तु विधिवत्कार्यं दीर्थादिषु क्रमेण तु ।
देशकालविशेषेण स्नानं कार्यं समन्त्रकम् ॥२८

बाँए हाथ से दस बार, फिर दोनों हाथों से सात-सात बार मृत्तिका लगावे, पाँव के तले गें तीन बार लगाकर फिर तीन बार हाथ धोवे। ।२। स्त्रियों को शूद्र के समान मिट्टी से हाथ धोने चाहिये। हाथ पाँव धोकर पूर्ववत् मिट्टी ग्रहण करे ॥२३॥ फिर अपने वर्ण क्रम के अनुरूप दाँतुन करे ॥२४॥ ब्राह्मण को वारह अंगुल की दाँतुन करने का विधान हैं, क्षत्रिय को ग्यारह अंगुल की और वैश्य को दस अंगुल की ॥२५॥ शूद्र भी नौ अंगुल की दाँतुन करे। इस प्रकार प्रमाण कहा गया है। काल-दोष का विचार करके क्रिया करे तो दृष्ट को भी वर्जित किया जा सकता है ।२६। छ, अमावस, नवमी व्रत का दिन, सूर्यास्त के समय, रविवार अथवा श्राद्ध के दिन दाँतुन करने का निषेध है ।२७। तीर्थादि में क्रमपूर्वक तथा विधि सहित स्नान करे, विशेषकर देशकाल के अनुसार ओर मन्त्र सहित स्नान करना चाहिये ॥२८॥

आचम्य प्रथमं तत्र धौतवस्त्रेण चाधरेत् ।
एकांते सुस्थले स्थित्वा संध्याविधिमथाचरेत् ॥२९
यथायोग्यं विधिं कृत्वा पूजाविधिमथारभेत् ।
मनस्तु सुस्थिरं कृत्वा पूजागारं प्रविश्य च ॥३०
पूजाविधिं समावाय स्वासने ह्युपविश्य वै ।
न्यासादिकं विधायादो पूजयेत्क्रमशो हरम् ॥३१
प्रथमं च गणाधीशं द्वारपालांस्तथैव च ।
दिक्पालांश्च सुसंपूज्य पश्चात्पीठं प्रकल्पयेत् ॥३२
अथवाऽष्टदलं कृत्वा पूजाद्रव्यसमीपतः ।
उपविश्य ततस्तत्र चोपवेश्य शिवं प्रभुम् ॥३३
त्रयमाचमनं कृत्वा प्रक्षाल्य च पुनः करौ ।
प्राणायामत्रयं कृत्वा मध्ये ध्यायेच्च त्र्यम्बकम् ॥३४
पचपवक्त्रं दशभुजां शुद्धस्फटिकसन्निभम् ।
सर्वाभरणासंयुक्तं व्याघ्रचर्मोत्तरीयकम् ॥३५

स्नान करने के पश्चात् धुले हुए वस्त्र धारण करे फिर स्वच्छ स्थान में एकान्त में बैठकर संध्या करे ।।२६।। यथाविधि करके, पूजन आरम्भ करे, मन को स्थिर करके पूजा स्थान में प्रवेश करे ।३०। विधि सहित आसन ग्रहण कर न्यासादि करे और फिर क्रम से शिवजी का पूजन करे ।३१। प्रथम गणेशजी को पूजे, फिर द्वारपाल और दिकपालों का पूजन करे और सिंहासन की कल्पना करे।३२। अथवा पूजा द्रव्य के निकट अष्टदल कमल बनाकर स्वयं बैठे और वहाँ भगवान् शिवजी की स्थापना करे ।३३। फिर तीन आचमन कर हाथ धोवे और तीन प्राणायाम कर मध्य में त्र्यम्बकदेव का ध्यान करे ।३४। पाँच मुख, दश भुजा, स्फटिक मणि के समान स्वच्छ सम्पूर्ण आभरण, व्याघ्र चर्म उत्तरीय सहित सुशोभित ।३५।

तस्य सारूप्यतां स्मृत्वा ददेत्पापं नरः सदा ।
शिवं ततः समुत्थाप्य पूजयेत्परमेश्वरम् ।३६
देहशुद्धि ततः कृत्वा मूल मन्त्रं न्यसेत्क्रमात् ।
सवत्र प्रणवेनैव षडगन्यासमाचरेत् ।३७
कृत्वा हृदि प्रयोगं च ततः पूजां समारभेत् ।
पाद्यार्गायमनार्थं च पात्राणि च प्रकल्पयेत् ।३८
स्थापयेद्विविधात्कुंभान्नव धीमान्यथाविधि ।
दर्भैराच्छाद्य तैरेव संस्थाप्याभ्युक्ष्य वारिणा ।३९
तेषु तेषु च सर्वेषु क्षिपेत्तोयं सुशीतलम् ।
प्रणवेन क्षिपेत्तेषु द्रव्याण्यालोक्य बुद्धिमान् ।४०
उशीरं चन्दनं चैव पाद्यं तु परिकल्पयेत् ।
जातिकंकोलकर्पूरवटमूलतमालकम् ।४१
चूर्णयित्वा तथान्यायं क्षिपेदाचमनीयके ।
एतत्सर्वेषु पात्रेषु दापयेच्चनव नान्वितम् ।।४२

भगवान शिवजी की सारूप्यता को प्राप्त होकर प्राणी अपने पापों को

सदैव क्षीण करे, फिर भगवान् शिव को उठाकर उनकी पूजा करे ।३६। फिर देह की शुद्धि कर क्रम पूर्वक मूलमन्त्र का न्यास करे, ओंकार के सहित षडग न्यास करना चाहिये ।३७। हृदय में प्रयोग करके पूजन प्रारम्भ करे और पाद्य, अर्घ्य, आचमन के लिए पात्रों की कल्पना करे ।३८। यथाविधि नवीन घट स्थापित करे, फिर कुशों से आच्छादित करके जल से छिड़के ।३९। उन सब पात्रों में शीतल जल भरे और द्रव्यों को ग्रहण कर प्रणवोच्चार सहित उममें डाले ।४०। पाद्य में उशीर और चन्दन प्रयोग करे । जायफल, कंकोल, कर्पूर, वटमूल और तमाल ।४१। सबको चूर्ण कर आचमन में डाले तथा चन्दन आदि भी इन पदार्थों में मिलावे ।४२।

पार्श्वयोर्देवदेवस्य नंदीशं तु समर्चयेत् ।
गंधैर्धूपस्तथा दीपैर्विविधः पूजयेच्छिवम् ।४३
लिंगशुद्धिं ततः कृत्वा मुद युक्तो नरस्तदा ।
यथोचित तु मन्त्रोधैः प्रणवादिनमोतकैः ।४४
कल्पयेदासनं स्वस्तिपद्मादि प्रणवेन तु ।
तस्मात्पूवदिश साक्षादणिमामयमक्षरम् ।४५
लघिमा ःक्षिणं चैव महिमा पश्चिमं तथा ।
प्राप्तश्च वोत्तर पत्रं प्राकाम्यं पावकस्य च ।४६
ईक्षित्वं नैर्ऋत पत्रं वशित्वं वायुगोचरे ।
सर्वज्ञत्व तथशान्यं र्काणका सोम उच्यते ।४७
सोमस्याथस्तथा सूर्यस्तस्याधः पावकस्त्वयम् ।
धर्मादीनपि तस्याधो भवतः कल्पयेत्क्रमाद् ।४८
अव्यक्तादि चतुर्दिक्षु सोमस्यांते गुणत्रयम् ।
सद्योजातं प्रवक्ष्यामीस्यावाह्य परमेश्वरम् ।४९

महादेवजी के पार्श्व में नन्दीजन का पूजन करे और विविध गन्ध, धूर, दीप से शिव का पूजन करे ।४३। फिर लिंग की शुद्धि कर, मन से ओंकार सहित नमस्कार करे ।४४। ओंकार सहित स्वस्ति कमल आदि युक्त आसनकी कल्पना करे और पूर्व की ओर साक्षात् अणिमायुक्त अक्षर

को ।४५। लघिमा सिद्धि दक्षिण की ओर, महिमा पश्चिम की ओर, प्राप्ति उत्तर की ओर तथा प्राकाम्य अग्नि दिशा में ।४६। ईशित्व नैऋत्य दिशा में, वशित्व को वायुकोण के दल में, सर्वज्ञ सिद्धि को ईशान में कल्पित करे तथा कर्णिका सोम कही जाती है ।४७। सोम के नीचे सूर्य उसके नीचे धर्मादि की कल्पना क्रमपूर्वक करे ।४८। अव्यक्तादिको चारों दिशाओं में, सोम के अन्त में तीनों गुणों को कल्पित करे तथा 'सद्योजातं प्रवक्ष्यामि' आदि मन्त्र से ईश्वर का आह्वान करना चाहिए ।४९।

वामदेवेन मन्त्रेण तिष्ठेच्चवासनोपरि ।
सान्निध्यं रुद्रगायत्र्या अघोरेण निरोधयेत् ॥५०
ईशानं सर्वविद्यानामिति मत्रेत्र पूजयेत् ।
पाद्यमाचमनीयं च विधायार्घ्यं प्रदापयेत् ॥५१
स्थापयेद्विधिना रुद्रं गंधचन्दनवारिणा ।
पञ्चगव्यविधानेन गृह्य पात्रेऽभिमन्त्र्य च ॥५२
प्रणवेनैव गव्येन स्नापयेत्मयसा च तम् ।
दध्ना च मधुना चैव तथा चेक्षुरसेन तु ॥५३
घृतेन तु तथा पूज्य सर्वकामहितावहम् ।
पुण्यैर्द्रव्यैर्महादेवं प्रणवेनाभिषेचयेत् ॥५४
पवित्रजलभाण्डेषु मंत्रैस्तोयं क्षिपेत्ततः ।
शुद्धीकृत्य यथान्यायं सितवस्त्रेण साधकः ॥५५
तावद्दूरं न कर्त्तव्यं न यावच्चन्दनं क्षिपेत् ।
तन्दुलैः सुन्दरैस्तत्र पूजयेच्छंकरम्मुदा ॥५६

वामदेव मन्त्रसे आसन पर स्थित हो, रुद्र गांयत्री से उनका सामीप्य तथा 'अघोरेभ्यो अथघोरेभ्यो' मन्त्र से निरोध करे ।५०। 'ईशानः सर्वविद्यानाम्' आदि मन्त्र से पूजा करे और पाद्य आचमन के पश्चात् अर्घ्य दे ।५१। गन्ध चन्दन के जल से विधिवत् रुद्र की स्थापना करे फिर पंच गव्य से ओंकार पूर्वक शिवजी को स्नान करावे । दही मधु और ईख के रस से ।५३। तथा घृत से सम्पूर्ण कामना और हित के देने वाले शिवजी का पूजन करे तथा पवित्र द्रव्यों से प्रणय पूर्वक शिवजी का पूजन करे

।५४। पवित्र जलों को मन्त्र सहित पात्रों में ग्रहण करे तथा यथा योग्य श्वेत वस्त्र से जल को छाने ।५५। जव तक चन्दन न डाले, तब तक दूर न करे तथा श्रेष्ठ चावलों से शिवजी का पूजन करे ।५६।

कुशापामार्गकर्पूरजातिचंपकपाटलैः ।
करवीरैस्सितैश्चैव मल्लिका कमलोत्पलैः ॥५७
अपूर्वपुष्पैर्विविधैश्चन्दनाद्यैस्तथैव च ।
जलेन जलधाराञ्च कल्पयेत्परमेश्वरे ॥५८
पात्रैश्च विविधैर्देवं स्नापयेच्च महेश्वरम् ।
मन्त्रपूर्वं प्रकर्तव्या पूजा सर्वफलप्रदा ॥५९
मन्त्राश्च तुभ्य ताँस्तात सर्वकामार्थ सिद्धये ।
प्रवक्ष्यामि समासेन सावधानतया श्रृणु ॥६०
पाठ्यमानेन मन्त्रेण तथा वाङ्मयकेन च ।
रुद्रेण नीलरुद्रेण सुशुक्लेन शुभेन च ॥६१
होतारेण तथा शीर्ष्णा शुभेनाथर्वणेन च ।
शांत्या वाथ पुनः शांत्या मारुणेनारुणेन च ॥६२
अर्थाभीष्टेन साम्ना च तथा देवव्रतेन । ६३

कुशा, चिरचिटा, कर्पूर जातिफल, चम्पक, पाटल, कनेर पुष्प, मल्लिका और कमल ।५७। तना अन्य अनेक अपूर्व पुष्प चन्दनादि से, पूजन कर शिवजी पर जल की धारा छोड़े ।५८। अनेक प्रकार के पात्रों में जल भरकर पूजन मंत्र पूर्वक की हुई पूजा सम्पूर्ण कामनाओं और फलों की देने वाली है ।५९। सभी कामनाओं की सिद्धि के निमित्त मैं उन मन्त्रों को संक्षेप में कहता हूँ, ध्यान पूर्वक श्रवण करो ।६०। पढ़ाये गये मन्त्र, वाङ्मय, कण्ठस्थ मंत्र, रुद्र सूक्त मंत्र, नीलसूक्त के मंत्र तथा शुक्ल यजुर्वेद के श्रेष्ठ मन्त्रों से ।६१। होतारम्० यजुमंत्र, अथर्वशीर्ष के मन्त्र, फिर शान्ति, आरुणि मन्त्र से ।६२। जो अपने को अनुकूल ही ऐसे अथर्व और साम मन्त्र तथा देव व्रत मन्त्र से ।६३।

रथांतरेण पुष्पेण सूक्तेन युक्तेन च ।
मृत्युंजयेन मन्त्रेण तथा पञ्चाक्षरेणाच ॥६४

जलधाराः सहस्रेन शतेनेकोत्तरेण वा ।
कर्तव्या वेदमार्गेण नामभिर्वाथ वा पुनः ।६५
ततश्चन्दनपुष्पादि रोपणीय शिवोपरि ।
दापयेत्प्रणवेनैव मुखबासादिकं तथा ।६६
ततः स्फटिकसंकाश देवं निष्कलमक्षयम् ।
कारणं सर्वलोकानां सवलोकमयं परम् ।६७
ब्रह्मेन्द्रोपेन्द्रविष्णवाद्यैरपि देवैरगोचरम् ।
वेदवित्भिर्हि वेदांते त्वगोचरमिति स्मृतम् ।६८
आदिमध्यान्तरहितं भेषज सर्व रोगिणाम् ।
शिवतत्वमिति ख्यातं शिवलिंगं व्यवस्थितम् ।६९
प्रणवेनैव मन्त्रेण पूजयेल्लिंगमूर्द्धनि ।
धूपैर्दीपैश्व नवेद्यैस्तांबूलैः सुन्दरैस्तथा ।७०

रथान्तर मन्त्र, पुष्पसूक्त के मन्त्र, मृत्युंजय मन्त्र तथा पंचाक्षर मंत्र से ।६४। एक हजार जलधारा से अथवा एक सौ एक जलधारा से वेद मन्त्रों से अथवा नाम मन्त्रोंसे भगवान् शिवजीके ऊपर अभिषेक करे।६५। फिर चन्दन, पुष्प आदि अर्पित करे तथा मुखवासादि के लिए सामग्री प्रणव से अर्पण करनी चाहिये ।६६। फिर स्फटिक मणि के समान देव कला रहित, क्षय रहित, सब लोकों के कारण एवं सर्वलोकमय परम स्वरूप ।६७। ब्रह्मा, इन्द्र, उपेन्द्र, विष्णु आदि को भी अगोचर तथा वेदान्तियों के वेदान्त में भी अगम्य ।६८। आदि, मध्य, अन्त से रहित, सब रोगों के लिए औषधि रूप, विख्यात शिवतत्व रूप शिव लिंग प्रतिष्ठित हैं ।६९। धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल शिव लिंग पर चढ़ाना चाहिए और चढ़ाते समय प्रत्येक बार प्रणव का उच्चारण करना चाहिए ।७०।

नीराजनेन रम्येण यथोक्तविधिना ततः ।
नमस्कारैः स्तवंश्चान्यैर्मंत्रैर्नानाविधैरपि ।७१
अर्ध्य दत्वा तु पुष्पाणि पादयोः सुविकीर्य च ।
प्राणिपत्य च देवेशमात्मनाऽऽ धियेच्छिवम् ।७२

हस्ते गृहीत्वा पुष्पाणि समुत्थाय कृतांजलिः।
प्रार्थयेत्पुनरीशानं मन्त्रेणानेन शङ्करम् ॥७३
अज्ञानाद्यदि वा ज्ञानाज्जपपूजादिकं मत्ता ।
कृतं तदस्तु सफलं कृपया तव शंकरः ॥७४
पठित्वैवं च पुष्पाणि शिवोपरि मुदा न्यसेत् ।
ततः स्वस्त्ययनं कृत्वा ह्याशिषो विविधास्तथा ॥७५
मार्जनं तु ततः कार्यं शिवस्योपरि वै पुनः ।
नमस्कार ततः क्षांति पुनराचमनाय च ॥७६
अघोच्चारणमुच्चार्य नमस्कारं प्रकल्पयेत् ।
प्रार्थ येच्च पुनस्तत्र सर्वभावसमन्वितः ॥७७

फिर यथाविधि नीराजन, नमस्कार और स्तुति करते हुए अनेक प्रकार के मन्त्रों का उच्चारण करे ।७१। अर्घ्य देकर शिवजी के चरणों में पुष्प अर्पण करे और प्रणाम पूर्वक उनका अर्पण करे ।७२। फिर हाथ में पुष्प ग्रहण कर उठे और अगले मन्त्र से ईशान देवता की आराधना करे ।७३। हे शंकर ! मैंने जो ज्ञान या अज्ञान से आपका पूजन किया है, वह सब आपकी कृपा से फलयुक्त हो ।७४। यह कहकर शिव जी के ऊपर पुष्प चढ़ावे, फिर स्वस्तिवाचन करके आशीर्वाद ग्रहण करे ।७५। फिर शिवजी के ऊपर मार्जन करे फिर नमस्कार कर अपराध क्षमा करावे और आचमन करावे ।७६। फिर अघोर मन्त्र का उच्चारण कर नमस्कार की कल्पना करे और सभी भावों से शिवजी की स्तुति प्रार्थना करे ।७७।

शिवं भक्तिः शिवे भक्तिः शिवे भक्तिर्भवेभवे ।
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मत ॥७८
इति संप्राथ्यं देवेशं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।
पूजयेत्परया भक्त्या गलनादैर्विशेषतः ॥७९
नमस्कारं ततः कृत्वा परिवारगणैः सह ।
प्रहर्षमतुलं लब्ध्वा कार्यं कुर्याद्यथासुखम् ॥८०
एव यः पेजयेन्नित्यं शिवभक्तिपरायणः ।

तस्य वै सकला सिद्धिर्जायते तु पदे पदे ।।८१
वाग्मी स जायते तस्य मनोभीष्टफलं ध्रुवम् ।
रोगं दुःखं च शोकं च ह्युद्वेग कृत्रिमं तथा ।।८२
कौटिल्यं च गरं चैव यद्यद्दुःखमुपस्थितम् ।
तद् दुःखं नाशयत्येव शिवः परः ।।८३
कल्याणं जायते तस्य शुक्लपक्षे यथा शशी ।
वर्द्धते सद्गुणस्तत्र ध्रुव शङ्कर पूजनात् ।।८४

मेरी शिवजी में भक्ति हो, निरन्तर शिवजी में भक्ति रहे । हे शिव! तुम ही मुझे शरण देने वाले हो, कोई दूसरा नहीं है ।७८। इस प्रकार सर्वसिद्धि प्रदायक देवों के भी ईश्वर शिवजी की प्रार्थना कर परम भक्ति पूर्वक कण्ठनाद के शब्दों द्वारा उन्हें प्रसन्न करे ।७९। फिर परिवारी जनों के सहित नमस्कार करता हुआ अत्यन्त प्रसन्नता को प्राप्त हो सुखदायक कार्य करे ।८०। जो मनुष्य शिव-भक्ति परायण होकर नित्य प्रति इस प्रकार पूजा करते हैं, उन्हें पद-पद में सिद्धि प्राप्त होती है ।८१। वह मनुष्य वाग्मी होता है और उसकी सभी इच्छाएँ फलदायक होती हैं । रोग, दुःख, शोक, उद्वेग, बनावट ।८२। कुटिलता तथा विष प्रयोग से उत्पन्न दुःखों को कल्याणकारी शिवजी नष्ट करते हैं ।८३। शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान उसका कल्याण होता और शिवजी की पूजा करने से सद्गुणों की वृद्धि होती हैं ।८४।

❋ लिंग पूजा विधान और स्तोत्र पाठ ❋

अतः परं प्रवक्ष्यामि पूजाविधिमनुत्तमम् ।
श्रूयतामृषयो देवयाः सर्वकामसुखावहम् ।।१
ब्राह्मे मुहूर्तै चोत्थाय संस्मरेत्सांवकं शिवम् ।
कुर्यात्तत्प्रार्थनां भक्त्या सांजलिर्नतमस्तकः ।।२
उत्तिष्ठोत्तिष्ट देवेश उत्तिष्ठ हृदयेशय ।
उत्तिष्ठ त्वमुमास्वामिन्ब्रह्माण्डे मङ्गलं कुरु ।।३
जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तर्जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः ।
त्वयामहादेवहृदि स्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मितथाकरोमि ।।४

इत्युक्त्वा वचनं भक्त्या स्मृत्या च गुरुपादुके ।
बहिर्गच्छेद्दक्षिणाशां त्यागार्थं मलमूत्रयोः ॥५
देहशुद्धिं ततः कृत्वा समृज्जलविशोधनैः ।
हस्तौ पादौ च प्रक्षाल्य दंतधावनमाचरेत् ॥६
दिवानाथे त्वनुदिते कृत्वा वै दंतधावनम् ।
मुखं षोडशवारं तु प्रक्षाल्यांजलिभस्तथा ॥७

ब्रह्माजी ने कहा—अब मैं श्रेष्ठ पूजन की विधि कहता हूं । हे देवताओ ! यह सब सुख और कामनाओं को देने वाली है ॥१॥ ब्रह्म मुहूर्त में उठ कर शिव-पार्वती का स्मरण करे और हाथ जोड़कर नत मस्तक हो भक्ति पूर्वक उनकी प्रशंसा करे ।२। हे देवेश ! हे हृदयशाये ! आप उठिए और ब्रह्माण्ड का कल्याण कीजिये ।२। मैं धर्म का ज्ञाता हूँ, किन्तु उसमें मेरी प्रवृत्ति नहीं है । हे प्रभो ! आप मेरे हृदय में स्थित होकर जैसी प्रेरणा करते हो, मैं उसी के अनुसार करता हूँ ।४। इस प्रकार भक्ति-भाव पूर्ण वचन कहे और गुरु पादुकाओं का स्मरण कर, मल-मूत्र त्यागार्थ ग्राम से बाहर दक्षिण दिशा को गमन करे ।५। फिर मिट्टी और जल से देह शुद्धि कर हाथ पाँव धोवे और दाँतुन करे ।६। सूर्योदय से पूर्व दाँतुन करके सोलह कुल्ला करे ।७।

यथावकाशं सुस्नायान्नद्यादिष्वथवा गृहे ।
देशकालविरुद्धं न स्नानं कार्यं नरेण च ।८
तैलाभ्यंगं च कुर्वीत वारान्दृष्ट्वा क्रमेण च ।
नित्यमभ्यंगके चैव वासितं वा न दूषितम् ॥९
श्राद्धे च ग्रहणे चैवोपवासे प्रतिपद्दिने ।
अथवा सार्षपं तैलं न दुष्येद्ग्रहणं विना ॥१०
देशं कालं विचार्य्यैवं स्नानं कुर्याद्यथाविधि ।
उत्तराभिमुखश्चैव प्राङ्मुखोऽप्यथवा पुनः ॥११
उच्छिष्टेनैव वस्त्रेण न स्नायात्स कदाचन ।
शुद्धवस्त्रेण स स्नातात्तद्देवस्मरपूर्वकम् ॥१२
परधार्य्यं च नोच्छिष्टं रात्रौ च विधृतं च यत् ।

तेन स्नानं तथा कार्यं क्षालितं च परित्यजेत् ॥१३
तर्पणं च ततः कार्यं देवर्षिपितृतृप्तिदम् ।
धौतवस्त्रं ततो धार्यं पुनराचमनं चरेद् ॥१४

यथा सुविधा नदी अथवा गृह में स्नान करे। स्नान देश काल को देखकर करना उचित है। वारों को देखकर क्रमानुसार तैल लगावे, नित्य तेल लगाने वाले की वास दूषित नहीं होती।६। श्राद्ध में, ग्रहण में, उपवास में, पड़वा में तेल न लगावे तो दोष नहीं है।१०। देश-काल को विचार कर, उत्तर या पूर्व की ओर मुख करके स्नान करे।११। उच्छिष्ट से स्नान न करे, अपने देवता का स्मरण करता हुआ शुद्ध वस्त्र से स्नान करे।१२। दूसरे का धारण किया हुआ वस्त्र उच्छिष्ट कहा है। परन्तु एक रात्रि का धारण किया हुआ वस्त्र उच्छिष्ट नहीं है, उससे स्नान करे और धोये हुए वस्त्र को छोड़ दे।१३। फिर देवताओं और ऋषियों की तृप्ति के लिए तर्पण करे और धुला हुआ वस्त्र धारण कर आचमन करे।१४।

शुचौ देशे ततो गत्वा गोमयाद्यपमार्जिते ।
आसनं च शुभं तत्र रचनीयं द्विजोत्तमाः ॥१५
शुद्धकाष्ठसमुत्पन्नं पूर्णं स्तरितमेव वा ।
चित्रासनं तथा कुर्यात्सर्वकामफलप्रदम् ॥१६
यथायोग्यं पुनर्ग्राह्यं मृगचर्मादिकं च यत् ।
तत्रोपविश्य कुर्वीत त्रिपुण्ड्रं भस्मवा सुधीः ॥१७
जपस्तपस्तथा दानं त्रिपुण्ड्रात्सफल भवेत् ।
अभावे भस्मनस्तत्र जलस्यादि प्रकीर्तितम् ॥१८
एवं कृत्वा त्रिपुण्ड्रं रुद्राक्षान्धारयेन्नरः ।
संपाद्य च स्वकं कर्म पुनराराधयेच्छिवम् ॥१९
पुनराचमनं कृत्वा त्रिवारं मन्त्रपूर्वकम् ।
एकं वाथ प्रकुर्याच्च गंगाबिन्दुरिति ब्रुवन् ॥२०
अन्नोदकं तथा तत्र शिवपूजार्थमाहरेत् ।
अन्यद्वस्तु यत्किंचिद्यथाशक्ति समीपगम् ॥२१

फिर गोबर से लिपे हुए पवित्र स्थान में सुन्दर आसन कल्पित करे ।१५। वह शुद्ध काष्ठ का और चिकना हो, ऐसा चित्रासन सर्व कामना और फल का देने वाला बनावे ।१६। फिर मृग चर्म आदि को ग्रहण कर उस पर बैठे और भस्म से त्रिपुण्ड धारण करे ।१७। त्रिपुण्ड धारण से जप, तप, दान सब सफल होता है, यदि भस्म न हो तो जल से ही त्रिपुण्ड्र लगाना चाहिए ।१८। इस प्रकार त्रिपुण्ड धारण के पश्चात् रुद्राक्ष धारण करे और सम्पादन करता हुआ, शिवजी की आराधना करे ।१९। फिर मन्त्र पूर्वक तीन आचमन करके गंगा विष्णु का उच्चारण करता हुआ एक बार तिलक लगावे ।२०। फिर शिवजी का पूजन करने के लिये यथाशक्ति अन्न, जल अथवा अन्य जो वस्तु हो निकट लावे ।२१।

कृत्वा स्थैर्यं च तत्रैव धैर्यमास्थाय वै पुनः ।
अर्धपात्रं तथा चैकं जलगंधाक्षतैर्युतम् ।।२२
दक्षिणांसे तथा स्थाप्यनुपचारस्य क्लृप्तये ।
गुरोश्च स्मरणं कृत्वा तदनुज्ञामवाप्य च ।।२३
संकल्पं विधिवत्कृत्वा कामनां न नियुज्य वै ।
पूजयेत्परया भक्त्या शिवं सपरिवारकम् ।।२४
मुद्रामेकां प्रदर्श्यैव पूजयेद्विघ्नहारकम् ।
सिंधुरादिपार्थैश्च सिद्धिबुद्धिसमन्वितम् ।।२५
लक्षलाभयुतं तत्र पूजयित्वा नमेत्पुनः ।
चतुर्थ्यंतैर्नामपदैर्नमोन्तैः प्रणवादिभिः ।।२६
क्षमाप्यैनं तदा देवं भ्रात्रा चैव समन्वितम् ।
पूजयेत्परया भक्त्या नमस्कुर्यात्पुनः पुनः ।।२७
द्वारपालं सदा द्वारि तिष्ठंतं च महोदरम् ।
पूजयित्वा ततः पश्चात्पूजयेद्गिरिजां सतीम् ।।२८

यह करता हुआ धैर्य पूर्वक वहाँ बैठे और फिर गन्ध, जल, अक्षत से युक्त अर्घ्य पात्र ग्रहण करे ।२२। फिर उपचार की पूर्ति के हेतु अपने दक्षिण ओर उसे स्थापित कर गुरु का स्मरण करे और उनकी

आज्ञा प्राप्त करके ।२३। विधिवत् संकल्प करे और उसमें अपनी कामना व्यक्त करता हुआ परम भक्तिभाव से सपरिवार शिवजी पूजा करे ।१४। फिर एक मुद्रा भेंट की उपस्थित कर विघ्नेश्वर की पूजा करे । इनकी पूजा सिद्धि बुद्धि से करता हुआ सिन्दूर आदि पदार्थ अर्पण करे ।२५। लक्ष लाभ युक्त पूजन करके नमस्कार करे और प्रणाम करे तो प्रणव सहित चतुर्थी विभक्ति नाम से लगाकर अन्त में नमः लगावे ।२६। फिर उनसे क्षमा कराकर स्कन्ध-भ्राता सहित परम भक्ति पूर्वक पूजा कर बारम्बार प्रणाम करे ।२७। शिवजी के द्वार पर सदा स्थित रहने वाले सहोदर नामक द्वारपाल की पूजा कर फिर सती पार्वती जी का पूजन करे ।२८।

चंदनैः कुंकुमैश्चैव धूपैर्दीपैरनेकशः ।
नैवेद्यैर्विविधैश्चैव पूजयित्वा ततः शिवम् ।।२९
नमस्कृत्यपुनस्तत्र गच्छेच्च शिवसान्निधौ ।
यदि गेहे पार्थिवीं वा राजती तथा ।।३०
धातुजन्यां तथैवान्यां पारदां वा प्रकल्पयेत् ।
नमस्कृत्य पुनस्तां च पूजयेद्भक्तितत्परः ।।३१
तस्यां तु पूजितायां वै सब स्युः पूजितास्तथा ।
स्थापयेच्च मृदा लिंगं विधाय विधिपूर्वकम् ।।३२
कर्तव्यं सर्वथा तत्र नियमात्स्वगृहे स्थितैः ।
प्राणप्रतिष्ठां कुर्वीत भूतशुद्धिं विधाय च ।।३३
दिक्पालान्पूजयेत्तत्र स्थापयित्वा शिवालये ।
गृहे शिवः सदा पूज्यो मूलमन्त्राभियोगतः ।।३४
तत्र तु द्वारपालानां नियमो नास्ति सर्वथा ।
गृहे लिंग च मत्पूज्यं तस्मिन्सर्वं प्रतिष्ठितम् ।।३५

चन्दन, केसर, धूप, दीपक, और नैवेद्य के द्वारा शिवजी का पूजन करे ।२९। फिर नमस्कार कर उनके निकट जाकर घर में स्वर्ण या रजत जो कुछ पार्थिव धातु हो ।३०। अथवा अन्य धातु या पारे की मूर्ति को नमस्कार कर भक्ति-भाव से तन्मयता पूर्वक पूजन करे ।३१। उसको

पूजने से सभी का पूजन हो जाता है। मृत्तिका का लिंग विधि पूर्वक स्थापित करे।३२। अपने घर में रहकर नियम पालन करे और भूत शुद्धि करके भगवान् की प्राण प्रतिष्ठा करे।३३। शिवालय में प्रतिष्ठित कर दिक्पालों को पूजे तथा घर में भी मूल मन्त्र से शिवजी की अर्चना।३४। घर में द्वारपाल के पूजन का नियम नहीं है, वहाँ जो लिंग पूजा जाता है उसी में सब प्रतिष्ठित हैं।३५।

पूजकाले च सांगं वै परिवारेण संयुतम् ।
आवाह्य पूजयेद्देवं नियमोऽत्र न विद्यते ॥३६
शिवस्य संनिधिं कृत्वा स्वसानं परिकल्पयेत् ।
उदङ मुखस्तदा स्थित्वा पुनराचमनं चरेत् ॥३७
प्रक्ष्याल्य हस्तौपश्चाद्वै प्राणायाम् प्रकल्पयेत् ।
मूलमन्त्रेण तत्रैव दशावर्तं नयेन्नरः ॥३८
पञ्च मुद्राः प्रकर्तव्याः पूजाऽवश्यं करेप्सिताः ।
एता मुद्राः प्रदर्श्यैव चरेत्पूजाविधिं नरः ॥३९
दीपं कृत्वा तदा तत्र नमस्कारं गुरोरथ ।
बद्ध्वा पद्मासनं तत्र भद्रासनमयापि वा ॥४०
उत्तानासनकं कृत्वा पर्यंका सनकं तथा ।
यथासुखं तथा स्थित्वा प्रयोगं पुनरेव च ॥४१
कृत्वा पूजां पुरा जातां वट्टकेनैव तारयेत् ।
यदि वा स्वयमेवेह गृहे न नियमोऽस्ति च ॥४२

पूजन के समय पूरे परिवार सहित आबाहन और देव-पूजन करे।३६। शिवजी के निकट ही अपना आसन कल्पित करे और उत्तराभिमुख होकर आचमन करे।३७। फिर हाथ धोकर प्राणायाम मूल-मन्त्र से दश बार करे।३८। फिर पाँचों मुद्रा दिखावे, क्योंकि पूजन हाथ से ही स्थित होता है, इन मुद्राओं को देखकर ही पूजन कार्य सम्पन्न करने का विधान है।३९। फिर दीपक करके गुरु को नमस्कार करे और पद्मासन या भद्रासन से स्थित होकर।४०। उत्तनासन अथवा पर्यंकासन करके सुख-पूर्वक बैठे।४१। पहिले के समान पूजन करके टबक से तारण

करके टबक से तारण करे और घर में ही पूजन हो तो इसका नियम नहीं हैं ।४२।

पश्चाच्चैवार्घपात्रेण क्षालयेल्लिंगमुत्तमम् ।
अनन्यमानसो भूत्वा पूजाद्रव्यं निधाय च ॥४३
पश्चाच्चावाहयेद्देवं मन्त्रेणानेन वै नरः ।
कैलासशिखरस्थं च पार्वतीपतिमुत्तमम् ॥४४
यथोक्तरूपिणं शंभुं निर्गुणं गुणरूपिणम् ।
पञ्चवक्त्रं दशभुजं त्रिनेत्रं वृषभध्वजम् ॥४५
कर्पूरगौरं दिव्यांगं चन्द्रमौलिं कपर्दिनम् ।
व्याघ्रचर्मोत्तरीयं च गजचर्माम्बरं शुभम् ॥४६
वासुक्यादिपरीतांगं पिनाकाद्यायुधान्वितम् ।
सिद्धयोऽष्टौ च यस्याग्रे नृत्यंतीह निरंतरम् ॥४७
जयजयेति शब्दैश्च सेवितं भक्तपुंजकैः ।
तेजसा दुःसहेनैव दुर्लक्ष्यं देवसेवितम् ॥४८
शरण्यं सर्वसत्वानां प्रसन्नमुखपंकजम् ।
वेदैः शास्त्रैर्यथा गीतं विष्णुब्रह्मनुतं सदा ॥४९

फिर परसोतम शिवलिंग को अर्ध्यपात में स्नान करावे और किसी दूसरी ओर मन न रखकर, पूजन-द्रव्य का विधान करे ।४३। फिर मन्त्र से आह्वान करे। कैलाश शिखर पर स्थित उमापति ।४४। निर्गुण-सगुण यथोक्त रूप शिव पाँच मुख, दश भुजा तीन नेत्र, वृषभध्वज ।४५। कर्पूर जैसे गोरांग, मस्तक पर चन्द्रमा तथा जटाजूट से शोभायमान, व्याघ्र चर्म का उत्तरीय धारण एवं श्रेष्ठ गजचर्म धारण किये ।४६। वासु की आदि सर्पों को कण्ठ में लपेटे, हाथ में पिनाक आदि आयुध धारण किये हैं, उनके आगे अष्ट सिद्धि निरन्तर नृत्य करती हैं ।४७। जिनके चारों ओर भक्त समूह जय-जयकार कर रहे हैं जो अपने दुःसह तेज के कारण देवताओं से सेवित एवं जुर्लक्ष्य बने हैं, ।४८। जो सब प्राणियों के शरणदाता, प्रसन्न मुखकमल से युक्त, वेद शास्त्रों के गान तथा ब्रह्मा, विष्णु द्वारा भी स्तत्य हैं ।४९।

भक्तवत्सलमानंदं शिवमावाहयाम्यहम् ।
एवं ध्यात्वाशिवं साम्वमासनं परिकल्पयेत् ।।५०
चतुर्थ्यंतपदेनैव सर्वं कुर्याद्यथाक्रमम् ।
ततः पाद्यं प्रदद्याद्वै ततोऽर्घ्यं शंकराय च ।।५१
ततश्चाचमनं कृत्वा संभवे परमात्मने ।
पश्चाच्च पंचभिर्द्रव्यैः स्नापयेच्छंकरं मुदा ।।५२
वेदमन्त्रैर्यथायोग्यं नामभिर्वा समन्त्रकैः ।
चतुर्थ्यंतपदैर्भक्त्या द्राव्याण्येवार्पयेत्तदा ।।५३
तथाभिलषितं द्रव्यमपयेच्छकरोपरि ।
ततश्च वारुणं कारमीयं शिवस्य वै ।।५४
सुगन्धं चन्दनं दद्यादन्यलेपानि यत्नतः ।
ससुगन्धजलेनैव जलधारां प्रकल्पयेत् ।।५५
वेदमंत्रैःषडगैर्वा नामभी रुद्रसंख्यया ।
तथावकाशं तां दत्वा वस्त्रेण मार्जयेत्ततः ।।५६

उन भक्त वत्सल, आनन्दस्वरूप भगवान् सदा शिव को मैं आह्वान करता हूँ । इस प्रकार ध्यान करने के पश्चात् आसन की कल्पना करनी चाहिए ।५०। चतुर्थ्यन्त पद से सब वस्तुओं का समर्पण करे फिर शिवजी के लिए पाद्य अर्घ्य दे ।५१। फिर आचमन करके पंचद्रव्य, घृत, शर्करा, जल आदि से शिवजी को स्नान करावे ।५२। वेद मन्त्रों से चतुर्थ्यन्त पद के द्वारा भक्ति-भाव सहित सभी वस्तुएँ अर्पण करे ।५३। सभी अभिलाषित पदार्थों को शिवजी पर चढ़ाकर फिर पार्वतीजी को जल-स्नान करावे ।५४। फिर सुगन्धित चन्दन अथवा अन्य अनुलेपन पदार्थ लगाकर सुगन्धित जल की धारा चढ़ावे ।५५। फिर वेद मन्त्र, षडंग अथवा एकादश नाम से स्नान कराके, वस्त्र से मार्जन करे ।५६।

पश्चादाचमनं दद्यात्ततो वस्त्रं समर्पयेत् ।
तिलाश्चैव जवा वापि गोधूमा मुद्गमाषकाः ।।५७
अर्पणीयाः शिवायैवं मन्त्रैर्नानाविधैरपि ।
ततः पुष्पाणि येयानि पञ्चास्याय महात्मने ।।५८

प्रतिवक्त्रं यथाध्यानं यथायोग्याभिलाषतः ।
कमलैः शतपत्रैश्च शंखपुष्पैः परैस्तथा ॥५६

कुशपुष्पैश्च धत्तूरैर्मंदारैर्द्रोणसंभवैः ।
तथा च तुलसीपत्रैर्बिल्पत्रैर्विशेषतः ॥६०

पूजयेत्परया भक्त्या शंकरं भक्तवत्सल ।
सर्वाभावे विल्वपत्रमर्पणीयं शिवाय वै ॥६१

बिल्वपत्रार्पणेनैव सर्वपूजा प्रसिध्यति ।
ततः सुगन्धचूर्णं वै वासितं तैलमुत्तमम् ॥६२

अर्पणीयं च विविधं शिवाय परया मुदा ।
ततो धूपः प्रकर्तव्यो गुग्गुलागुरुभिर्मुदः ॥६३

फिर आचमन कराकर वस्त्र भेंट करे और तिल, जौ, गेहूँ, मूँग ।५७। यह सब अनाज मन्त्रोच्चारण पूर्वक शिवजी को भेंट करे और पाँचों मुखों पर पाँच पुष्प समर्पित करे ।५८। प्रत्येक मुख का अपनी अभिलाषा के अनुरूप ध्यान करे, कमल, शतपत्र, तथा शंखपुष्पी के पुष्प ।५६। कुश पुष्प, धतूरा, मन्दार, द्रोण, तुलसी पत्र तथा विल्प पत्रों से ।६६। भक्तवत्सल भगवान् शिवजीका परम भक्ति पूर्वक पूजन करे । यदि अन्य कोई वस्तु उपलब्ध न हो तो बिल्पपत्र ही समर्पित करे ।६१। बिल्व पत्र के समर्पण से ही सब पूजन सिद्ध हो जाता है । फिर सुगन्धित चूर्ण द्वारा सुवासित किया हुआ उत्तम तेल ।६६। प्रसन्नता पूर्वक शिवजी को समर्पित करे, फिर प्रेम पूर्वक गूगल और अगर की धूप दे ।६३।

दीपो देयस्ततस्तस्मै शंकराय घृतप्लुतः ।
अर्घं दद्यात्पुनस्तस्मै मन्त्रेणानेन भक्तितः ॥६४

कारयेद्भावतो भक्त्या वस्त्रेण मुखमार्जनम् ।
रूपं देहि यशो देहि भोगं देहि च शंकर ॥६५

मुक्तिभुक्तिफल देहि गृहीत्वऽर्घं नमोस्तु ते ।
ततो देयं शिवायेव नैवेद्यं विविधं शुभम् ॥६६

तत आचमनं प्रीत्या कारयेद्वा विलम्बतः ।
सतश्शिवाय तांबूल सांगोपांग विधाय च ॥६७

कुर्यादारार्तिकं पंचवर्तिकामनुसंख्यया ।
पादयोश्च चतुर्वारं द्विःकृत्वो नाभिमण्डले ।६८
एककृत्वे मुखे सप्तकृत्वः सर्वांग एव हि ।
ततो ध्यानं यथोक्तं वै कृत्वा मन्त्रमुदीरयेत् ॥६९
यथासंख्यं यथाज्ञानं कुर्यान्मन्त्रविधिं नरः ।
गुरूपदिष्टमार्गेण कृत्वा मन्त्र जपं सुधीः ॥७०

फिर घी से भरा हुआ दीपक आगे रखे और अगले मन्त्र से भक्ति-सहित अर्घ्य प्रदान करे ।६४। फिर भक्ति सहित वस्त्र से मुख मार्जन करे और प्रार्थना करे कि हे देव ! मुझे रूप यश और भोग प्रदान कीजिये ।६५। हे प्रभो ! आपको प्रणाम, आप अर्घ्य को ग्रहण कर मुझे भुक्ति-मुक्ति का फल प्रदान करिये । फिर शिवजी के लिए श्रेष्ठ नैवेद्य भेंट करे ।६६। फिर कुछ देर बाद, प्रीति पूर्वक आचमन करावे और सांगोपांग विधान द्वारा ताम्बूल अर्पण करे ।६७। फिर पाँच बत्ती की आरती करे और चार वार चरणों में तथा नाभि मण्डल में ।६८। एक बार मुख पर तथा सात बार सम्पूर्ण अंग में आरती करे और जैसा कहा गया है, उस प्रकार ध्यान और मन्त्रोच्चारण करे ।६९। यथा संख्या और यथा ज्ञान मनुष्य को मन्त्र विधि करनी उचित है । गुरु द्वारा उपदेशित मार्ग में मन्त्र का जप करता हुआ ॥७०॥

गुरूपदिष्टमार्गेण कृत्वा मन्त्रमुदीरयेत् ।
यथासंख्यं यथाज्ञानं कुर्यान्मन्त्रविधिं नरः ॥७१
स्तोत्रैर्नानाविधैः प्रीत्या स्तुवीत वृषभध्वजम् ।
ततः प्रदक्षिणां कुर्याच्छिवस्य च शनैः शनैः ॥७२
नमस्कारांस्ततः कुर्यात्साष्टांग विधिवत्पुमान् ।
ततः पुष्पांजलिर्देयो मन्त्रेणानेन भक्तितः ॥७३
शंकराय परेशाय शिवसंतोषहेतवे ।
अज्ञानाद्यादि वा ज्ञानाद्यद्यत्पूजादिकं मया ॥७४
कृतं तदस्तु सफलं कृपया तव शंकरं ।
तावकस्त्वद्गतप्राणस्त्वच्चित्तोहं सदा मृड ॥७५

इति विज्ञाय गौरीश भूतनाथ प्रसाद मे ।
भूमौ स्खलितपादानां भूमिरेववलंगनत् ।।७६
त्वयि जातापराधानां त्वमेव शत्रण प्रभो ।
इत्यादि वहुविज्ञप्ति कृत्वा सम्यग्विधानतः ।।७७

गुरु के बताए मार्ग के अनुसार ही मन्त्रोच्चारण करे । यथा संख्या और यथा ज्ञान मन्त्र की विधि का उपयोग करे ।७१। तथा प्रसन्नतापूर्वक अनेक प्रकार के स्तोत्रों से शिवजी की स्तुति करे, धीरे २ प्रदक्षिणा करे ।।७२।। फिर विधिवत् साष्टांग नमस्कार कर अगले मन्त्र से भक्ति-भाव पूर्वक पुष्पांजलि समर्पित करे ।३७। "भगवान् शंकर की सन्तुष्टि के निमित्त ज्ञान अथवा अज्ञान से मैंने जो पूजनादि किया है ।७४। हे शंकर! आपकी कृपा से यह सब सफल हो । मेरे प्राण आप में ही हैं । हे शिव ! आप सुख के देने वाले हैं, आप में ही मेरा चित्त है ।७५। हे गौरीपते ! हे भूतनाथ ! इस प्रकार जानकर आप मुझ पर प्रसन्न हों, जिनका पृथ्वी से चरण फिसलता है, उनको अवलम्ब पृथिवी ही है ।७६। आप में जो मेरा अपराध हुआ है उसमें आप ही शरण रूप हैं । इस प्रकार विधिवत् बहुत सी विज्ञप्ति करे ।७७।

पुष्पांजलिं समर्प्यैव पुनः कुर्यान्नतिं मुहुः ।
स्वस्थानं गच्छ देवेश परिबारयुतः प्रभो ।।७८
पूजाकाले पुनर्नाथ त्वयाऽऽगंतव्यमादरात् ।
इति संप्राथ्य बहुशः शंकरं प्रक्तवत्सलम् ।।७९
विसर्जयेत्स्वहृदये तदषो मूर्ध्नि विन्यसेत् ।
इति प्रोक्तमशेषेण मुनयः शिवपूजनम् ।
भुक्तिमुक्तिप्रदं चैव तिमान्यच्छ्रोतुमर्हथ ।।८०

और पुष्पांजलि भेंट कर बारम्बार प्रणाम करे और निवेदन करे कि हे प्रभो ! आप सपरिवार अपने स्थान को गमन करें ।७८। हे प्रभो ! पूजन के समय यहाँ पुनः पधारने की कृपा करना । इस प्रकार भक्तवत्सल भगवान् शिवजी की अनेक प्रकार से प्रार्थना करे ।७९। और विसर्जन करके उनकी जलमय मूर्ति को अपने हृदय में धारण करे ।

हे मुनीश्वरो ! शिवजी का पूजन इस प्रकार तुमसे कहा है, यह भुक्ति-मुक्ति का दाता है । अब और क्या सुनने की इच्छा है ? ।८०।

※ विशेष पुष्पों से शिव पूजन का फल ※

व्यासशिष्य महाभाग कथय त्वं प्रमाणतः ।
कैः पुष्पै पूजितः शंभुः किं किं यच्छति वै फलम् ॥
शौनकाद्याश्च ऋषयः शृणुतादरतोऽखिलम् ।
कथयाम्यद्य सुप्रीत्या पुष्पार्पण विनिर्णयम् ॥२
एष एव विधिः पृष्टो नारदेन महर्षिणा ।
प्रोवाच परमप्रीत्या पुष्पार्पण विनिर्णयम् ॥३
कमलैर्बिल्वपत्रैश्च शतपत्रैस्तथा पुनः ।
शंखपुष्पैस्तथा देवं लक्ष्मीकामोऽर्चयेच्छिवम् ॥४
एतैश्च लक्षसंख्याकैः पूजितश्चेद्भवेच्छिवः ।
पापहानिस्तथा विप्र लक्ष्मीःस्यान्नात्र संशयः ॥५
विंशतिः कमलानां तु प्रस्थमेकमुदाहृतम् ।
बिल्बो दलसहस्रेण प्रस्थार्द्धं परिभाषितम् ॥६
शतपत्रसहस्रेण प्रस्थार्द्धं परिभाषितम् ।
पलैः षोडशभिः प्रस्थः पलं टंकदश स्मृतः ॥७

ऋषियों ने कहा—हे व्यास शिष्य सूतजी ! अब आप यह बताइये कि किस २ पुष्प के द्वारा पूजन करने से शिवजी क्या २ फल प्रदान करते हैं ।१। सूतजी ने कहा—हे ऋषियों ! मैं अब पुष्पों के अर्पण का क्रम पूर्वक विवरण करता हूँ; तुम आदर पूर्वक श्रवण करो ।२। यह विधि महर्षि नारद ने भी पूछी थी और ब्रह्माजी ने प्रसन्न होकर उनके प्रति कही थी ।३। ब्रह्माजी ने कहा था कि कमल, बेलपत्र, शशपत्र या शंखपुष्पी से शिवजी की पूजा करे तो लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ।४। यदि इन एक लक्ष पुष्पों से शिवजी का पूजन करे तो निःसन्देह पाप नष्ट हो और लक्ष्मी की प्राप्ति हो ।५। बीस कमल पुष्पों का एक प्रस्थ

होता है और हजार बेल पत्रों का आधा प्रस्थ होता है।६। तथा हजार शतपत्र का भी आधा प्रस्थ होता है। सोलह फल का एक प्रस्थ तथा दश टंक का एक पल होता है ॥७॥

अनेनैव तु मानेन तुलामारोपयेद्यदा।
सर्वान्कामानवाप्नोति निष्कामश्चेच्छिवो भवेत् ॥८
राज्यस्य कामुको यो वै पार्थिवानां च पूजया।
तोषयेच्छंकरं देवं दशकोटचा मुनीश्वराः ॥९
लिंग शिवं तथा पुष्पमखंड तंदुलं तथा।
चर्चितं चंदनेनैव जलधारां तथा पुनः ॥१०
प्रीतिरूपं तथा मन्त्रं बिल्वीदलमनुत्तामम्।
अथवा शतपत्रं च कमलं वा तथा पुनः ॥११
शंखपुष्पैस्तथा प्रोक्तं विशेषेण पुरातनैः।
सर्वकामफलं दिव्यं परत्रेहापि सर्वथा ॥१२
धूपं दीपं च नैवेद्यमर्घं चारार्तिकं तथा।
प्रदक्षिणां नमस्कारं क्षमापनविसर्जने ॥१३
कृत्वा सागं तथा भोज्यं कृते येन भवेदिह।
तस्य वै सर्वथा राज्यं शंकरः प्रददाति च ॥१४

इस परिमाण में तराजू पर चढ़ानेसे कामना रहित होकर पूजन करे तो सब कामनायें प्राप्त होकर शिव रूप हो जाता है जो राज्य चाहता हो वह दश करोड़ पार्थिव पूजा से शिव को प्रसन्न करे। जो मनुष्य शिव लिंग पर पुष्प तथा चावल चढ़ाकर चन्दन और जल धारा अर्पण करे। प्राचीन जनों ने शंख पुष्पों से विशेष रूप से पूजन करने को कहा है। यह इस लोक और परलोक में भी दिव्य कामनाओं का देने वाला है।८-१२। धूप, दीप, नैवेद्य, अर्घ्य, आरती, प्रदक्षिणा, नमस्कार, क्षमापन और विसर्जन यह सभी विधिवत् करके जिसने शिवजी को भोग लगाया, उसे भगवान् शिव राज्य प्रदान करते हैं ॥१३-१४॥

प्राधान्यकामुको यो वै तदर्द्धेनार्चयेत्पुमान्।
कारागृहगतो यो वै लक्षेनैवार्चयेद्धरम् ॥१५

रोगग्रस्तो यदा स्याद्वै यदर्द्धं नार्चयेच्छिवम् ।
कन्याकामो भवेद्यो वै तदर्द्धेन शिवं पुनः ।।१६
विद्याकामस्तथा यः स्यात्तदर्द्धं नार्चयेच्छिवम् ।
वाणीकामो भवेद्यो वै घृतेनैवार्चयेच्छिवम् ।।१७
उच्चाटनार्थं शत्रूणां तन्मितेनैव पूजनम् ।
मारणे वै तु लक्षेण मोहने तु तदर्धतः ।।१८
सामंतानां जये चैव कोटिपूजा प्रशस्यते ।
राज्ञामयुतसंख्यं च वशीकरणकर्मणि ।।१९
यशसे च तथा संख्या वाहनाद्यैः सहस्त्रिका ।
मुक्तिकामोऽर्चयेच्छंभुं पंचकोट्या सुभक्तितः ।।२०
ज्ञानार्थी पूजयेत्कोट्या शंकरं लोकशंकरम् ।
शिवदर्शनकामो वै तदर्द्धेन प्रपूजयेत् ।।२१

तथा जो व्यक्ति अपनी प्रधानता चाहता हो वह शिवजी का इससे आधा पूजन करे। यदि कारागृह से मुक्त होना चाहें तो एक लाख कमलों से शिवजी की पूजा करनी चाहिये। रोगी मनुष्य पचास हजार कमलों से और कन्या की कामना वाला मनुष्य पच्चीस हजार कमलों से पूजन करे। विद्या प्राप्ति की इच्छा वाला इससे आधा और वाणी की कामना वाले को घृत से पूजन करना चाहिए। शत्रुओं के उच्चाटनार्थ भी उतनी ही पूजा करे, मारण कर्म में एक लाख और मोहन कर्म में पचास हजार पुष्पों का विधान है।१५-१८। सामन्तों को जीतने में एक करोड़ और राजा के वशीकरण में दस लाख पूजन कहा गया है यश की कामना वाले को भी इतनी पूजा कही है। वाहनादि की प्राप्ति के लिये एक हजार तथा मोक्ष की कामना वाले को पाँच करोड़ पूजन का विधान है ज्ञान की अभिलाषा वाला मनुष्य कल्याणकारी शिवजी को एक करोड़ पुष्पों से पूजे, तथा शिवजी के साक्षात्कार की कामना वाला इससे आधा पूजन करे ।।१९-२१।।

तथा मृत्युंजयो जाप्यः कामकाफलरूपतः ।
पचलक्षा जपा यर्हि प्रत्यक्षं तु भवेच्छिवः ।।२२

लक्षेण भजते कश्चिद्द्वितीये जातिसंभवः ।
तृतीये कामनालाभश्चतुर्थे त प्रपश्यति ॥२३
प ंचमं यदा लक्षं फलं यच्छत्यसंशयम् ।
अनेनैव तु मन्त्रेण दशलक्षे फलं भवेत् ॥२४
मुक्तिकामो भवेद्यो वै दर्भे श्च पूजनश्चरेत् ।
लक्षसंख्या तु सर्व त्र ज्ञातव्या ऋषिसत्तम ॥२५
आयुःकामो भवेद्यो वै दुर्वाभिः पूजनश्चरेत् ॥२६
पुत्रकामो भवेद्यो वै धत्तूरकुसुमैंश्चरेत् ॥२६
रक्तदण्डश्च धत्तूरः पूजने शुभदः स्मृतः ।
अगस्त्यकुसुमैश्चैव पूजकस्व महद्यशः ॥२७
भुक्तिमुक्तिफलं तस्य तुलस्या पूजयेद्यदि ।
अर्कपुष्पैः प्रतापश्च कुब्जकह्लारकैस्तथा ॥२८

अन्य कामना प्राप्ति के लिए मृत्यु ंजय का जप कर इसके पाँच लाख विधिवत् जप से शिवजी से साक्षात् होता है । कोई एक लाख से पूजते हैं, दो लाख से जाति का, तीसरे लाख में कामना का और चौथे लाख में शिवजी के दर्शन का लाभ मिलता है । पाँच लाख में पूर्ण फल की प्राप्ति होती है। इसी मन्त्र से दस लाख में सर्वार्थ फल प्राप्त होता है । मोक्ष-कामना वालों को कुशों से पूजन करना चाहिए । हे ऋषियो ! इस पूजन में सर्वत्र लाख संख्या में सामग्री लेनी चाहिए ।२२-२५। आयु की कामना वाले को एक लाख दूर्वा से पूजन करना कहा है । पुत्र की कामना वाले को एक लाख धतूरों से पूजन का विधान है । आल डन्डी वाला धतूरा ही पूजन में ग्रहण करे, अगस्त्य के पुष्पों से पूजा करने वाले को अत्यन्त यश की प्राप्ति होती है । तुलसी के पूजन से भुक्ति-मुक्ति दोनों उपलब्ध होती हैं। कुब्ज कल्हार या आक के पुष्पों से पूजने से प्रताप की वृद्धि होती है ।२६-२८।

जपाकुमुमपूजा तु शत्रूणां मृत्युदा स्मृता ।
रोगोच्चाटनकानीह करवीराणि वै क्रमात् ॥२६
बंधुकैर्भू षणावाप्तिर्जात्या वाहान्न संशयः ।

अतसीपुष्पकैर्देवं विष्णुवल्लभतामियात् ॥३०
शमीपत्रैस्तथा मुक्तिः प्राप्यते पुरुषेण च।
मल्लिकाकुसुमैर्दत्तैः स्त्रीयं शुभतरां शिवः ॥३१
यूथिकाकुसुमैः शस्तैर्गृहं नैव विमुच्यते।
कर्णिकारैस्तथा वस्त्रसंपत्तिर्जायते नृणाम् ॥३२
निर्गुण्डीकुसुमैर्लोके मनो निर्मलतां व्रजेत।
बिल्वपत्रैस्तथा लक्षैः सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥३३
शृंगारहारपुष्पैस्तु वर्धते सुखसम्पदा।
ऋतुजातानि पुष्पाणि मुक्तिदानि न संशयः ॥३४
राजिकाकुसुमानीह शत्रूणां मृत्युदानि च।
एषां लक्षं शिवे दद्याद्दद्याच्च विपुलं फलम् ॥३५
विद्यते कुसुमं तन्न यन्नैव शिववल्लभम्।
चंपकं केतकं हित्वा त्वन्यत्सर्वं समर्पयेत् ॥३६

जपा के पुष्पों से पूजे तो शत्रु नाश और कनेर पुष्पों से पूजे तो रोग नष्ट होते हैं। उच्चाटन कर्म में भी कनेर पुष्प ले। भूषणों की प्राप्ति के लिए बन्धूक के पुष्प और वाहन प्राप्ति के लिए चमेली के पुष्प तथा विष्णु की प्रीति के लिए अलसी के पुष्पों से पूजन करे। मोक्ष प्राप्ति के लिए शमीपत्र से तथा सुन्दर स्त्रियों की कामना वाला मल्लिका के पुष्पों से शिवजी का पूजन करे। यूथिका के पुष्पों से पूजे तो घर में धान्यों का अभाव नहीं होता। कर्णिकार के पुष्पों से पूजे तो वस्त्र और सम्पत्ति की उपलब्धि होती है ॥२९-३२॥ निर्गुण्डी के पुष्पों से पूजन मन को स्वच्छ करता है तथा एक लाख बेलपत्रों से पूजे तो सब कामनाएँ पूर्ण होती हैं। हारसिंगार के पुष्पों से पूजा करे तो सुख-सम्पत्ति की वृद्धि होती है तथा ऋतु के उत्पन्न हुये पुष्पों से पूजन करे तो मोक्ष मिलती है। राई के पुष्पों से पूजन करे तो शत्रुओं की मृत्यु होती है और एक लाख पुष्पों के चढ़ाने से अत्यन्त फल की प्राप्ति होती है। शिवजी को सभी पुष्प प्रिय हैं, चम्पा और केतकी न चढ़ावे, अन्य सब पुष्प अर्पण करे ॥३३-३६॥

रुद्र संहिता--सती खंड

❋ हिमालय पर शिव और सती का बिहार ❋

कदाचिदथ दक्षस्य तनया जलदागमे ।
कैलासक्ष्माभृतः प्राह प्रस्थस्थं वृषभध्वजम् ।।१
देवदेव महादेव शंभो मत्प्राणवल्लभ ।
शृणु मे वचनं नाथ श्रुत्वा वकुरु मांनद ।।२
घनागमौऽयं संप्राप्तः कालः परमदुःसहः ।
अनेकवर्णमेघौघः संगीनांवरं दिक्चगः ।।३
विवांति वाता हृदयं हारयंतीति वेगिनः ।
कदंबरजसा धौताः पाथोबिन्दुविकर्षणाः ।।४
मेघानां गर्जितैरुच्चैर्धारासारं विमुंचताम् ।
विद्युत्पताकिनां तीव्रैः क्षुब्धं स्यात्कस्य नो मनः ।।५
न सूर्यो दृश्यते नापि मेघच्छन्नो निशापतिः ।
दिवापि पात्रिवद्भाति विरहिव्यसनाकरः ।।६
मेघा नैकत्र तिष्ठन्तो ध्वनंतः पवनेरिताः ।
पतंत इव लोकानां दृश्यते मूर्ध्नि शंकर ।।७

ब्रह्माजी ने कहा—एक समय वर्षा ऋतु में शिवजी कैलाश के शिखर पर विराजमान थे, उस समय सती ने उनसे कहा ।।१।। सती ने कहा—हे देवाधिदेव ! हे प्राणवल्लभ ! हे नाथ ! आप मेरी बात सुनिये और उसके अनुसार कीजिये ।।२।। हे प्रभो ! यह अत्यन्त दुःसह वर्षा काल आ गया है, अनेक वर्ण के मेघ दशों दिशाओं में आ घिरे हैं ।३। हृदय का हरण करने वाली वायु प्रवाहित हो रही है, कदम्ब के मकरन्द से युक्त जल के छींटे आ रहे हैं ।४। जल धाराओं की वर्षा करते, गर्जते तथा बिजली चमकाते हुए मेघों को देखकर किसका मन क्षुब्ध नहीं हो जायगा ? ।।५।। यह ऋतु विरही जनों को दुःखदायक है । इसमें दिन

में सूर्य और रात्रि से चन्द्रमा भी प्रकाशित नहीं होता। यह दिवस को रात्रि जैसा रखता हुआ सुशोभित है।६। हे शिव! वायु वेग से प्रेरित हुए मेघ शब्द करते हैं परन्तु एकत्र नहीं ठहरते और लोगों के सिर पर गिरते हुए से लगते हैं ॥७॥

वाताहता महावृक्षा नतन्त इव चांवरे।
दृश्यंते हर भीरूणां त्रासदाः कामुकेप्सिताः ॥८
स्निग्धनीलांजनस्याशु सदिवौघस्य पृष्ठतः।
बलाकराजी चात्युच्चैर्यमुनापृष्ठफेनवत् ॥६
क्षपाक्षयेषु वलयं दृश्यते पलिकागता।
अंबुधाविव मदीप्तपावको वडवामुखः ॥१०
प्रारोहंतीह सस्यानि मन्दिरं प्राङ्गणेष्वपि।
किमन्यत्र विरूपाक्ष सस्योद्भूतिं वदाम्यहम् ॥११
श्यामलै रायतै रक्तविशदोऽयं हिमाचलः।
मन्दराश्रयघौघः पत्रैर्दुग्धाम्बुधिर्यथा ॥१२
असमश्रीश्च कुटिल भेजे यस्याथ किंशुकान्।
उच्चावचान् कलौ लक्ष्मीर्गन्तासंत्यज्य सज्जनान् ॥१३
मंदारस्तनपीलूनां शब्देन हृषिता मृडः।
केकायंते प्रतिवने सततं पृष्ठसूत्रकम्। १४

हे शिव! वायु प्रेरित बड़े-बड़े वृक्ष भी अंतरिक्ष में नृत्य करते से प्रतीत होते हैं, जो भयभीतों को भया वह और कामियों को सुखदायक है।८। चिकने और श्याम वर्ण अंजन जैसे मेघ पर उड़ते हुए बगुलों को पंक्ति यमुना नदी की पीठ पर बहते हुए फेन के समान शोभा दे रही है।१६। रात्रि की उपस्थित में कालापन बढ़ जाने से बिजली बलयाकार दिखाई देती है, जिस प्रकार कि समुद्र प्रदीप्त बड़वामुख अनल होती है ॥१०॥ हे विरूपाक्ष! इस अवस्था में मन्दराचल के छोटे वृक्ष जम गये हैं, अन्य स्थान की बात ही क्या है? ।११। जैसे पक्षियों से घिरा हुआ दुग्ध का समुद्र शोभा देता है, वैसे ही काले, सफेद तथा लाल मेघों से घिरा हुआ वह पर्वत शोभा दे रहा है ॥१२॥ विभिन्न

प्रकार से सुशोभित वृक्षों के पल्लव अत्यन्त शोभायमान हैं, उसी प्रकार जैसे कि कलि में लक्ष्मी सज्जनों को त्याग कर असज्जनों को प्राप्त होती है ॥१३॥ मन्दराचल के मेघों की ध्वनि से प्रसन्न होकरमोर भी अपनी पीठ दिखाकर नृत्य कर रहे हैं ॥१४॥

मेघोत्सुकानां मधुरश्चातकानां मनोहरः ।
धारासारशरैस्तापं पेतुः प्रतिपथोद्गतम् ॥१५
मेघानां पश्य मद्देहे दुर्नयं करकोत्करैः ।
ये छादयंत्यनुगते मयूरांश्चातकांस्तथा ॥१६
शिखिसारंगयोर्दृष्ट्वा मित्रादपि पराभवम् ।
हर्षं गच्छन्ति गिरिशं विदूरमपि मानसम् ॥१७
एतस्मिन्विषमे काले नीडं काकश्चकोरकाः ।
कुर्वंति त्वां विना गेहान् कथ शांतिमवाप्स्यसि ॥१८
महतीवाद्य नो भीतिर्मा मेघोत्था पिनाकधृक् ।
यतस्व यस्माद्वासाय माचिरं वचनान्मम ॥१९
कैलासे वा हिमाद्रौ वा महाकोश्यामथ क्षितौ ।
तत्रोपयोग्यं संवासं कुरु त्वं वृषभध्वज ॥२०

मेघों की कामना वाले चातकों की मधुर ध्वनि भी सुनाई पड़ रही है ॥१५॥ मेघों की इस दुर्नीति का अवलोकन कीजिए की यह अपने अनुगामी मोरों और चातकों को ओलों से आच्छादित कर देता है ॥१६॥ मोर और सारंग को मित्र से भी हारता देखकर उनका मन हर्षित हो रहा है ॥१७॥ इस विषम समय में कौए और मोर भी अपना घोंसला बनाते हैं तो आप ही बिना घर के किस प्रकार शान्ति प्राप्त करेंगे ॥१८॥ हे पिनाकी ! हे शंकर ! मुझे मेघों से अत्यन्त भय लग रहा है, इसलिए आप मेरी बात मान कर घर का प्रबन्ध कीजिए ॥१९॥ हे वृषभध्वज ! कैलाश, में हिमालय में, काशी में अथवा पृथिवी पर जहां कहीं भी उचित हो, घर का प्रबन्ध आवश्यक है ॥२०॥

एवमुक्तस्तया शंभुर्दाक्षायण्या नथाऽसकृत् ।
संजहास च शीर्षस्थचन्द्ररश्मिस्मितालयम् ॥२१

अथोवाच सतीं देवीं स्मिताभिन्नौष्ठसंपुटः ।
महात्मा सर्वतत्त्वज्ञास्तोषयन्परमेश्वरः ।२२
यत्र प्रीत्यै मया कार्यो वासस्तव मनोहरे ।
मेघास्तत्र न गंतारः कदाचिदपि मत्प्रिये ।।२३
मेघा नितंबपर्यंतं सञ्चरंति महीभृतः ।
सदा प्रालेयसानोस्तु वर्षास्वपि मनोहरे ।।२४
कैलासस्य तथा देवि पादगाः प्रायशो घनाः ।
सञ्चरंति न गच्छन्ति तत ऊर्ध्वं कदाचन ।।२५
सुमेरोर्वा गिरेरूर्ध्वं न गच्छन्ति बलाहकाः ।
जम्बूमूलं समासाद्य पुष्करावर्तकादयः ।।२६
इत्युक्तेषु गिरीन्द्रेषु यस्योपरि भवेद्धि ते ।
मनोरुचिर्निवासाय तमाचक्ष्व द्रुतं हि मे ।।२७
स्वेच्छाविहारैस्तव कौतुकानि सुवर्णपक्षानिलवृन्दवृन्दैः ।
शब्दोत्तरं गैर्मधुरस्वनैस्तैर्मुदोपगेयानि गिरौ हिमोत्थे ।।२८

ब्रह्माजी ने कहा—दाक्षायणी की प्रार्थना सुनकर शिवजी को हँसी आई और उनके मस्तक पर स्थित अर्द्धचन्द्र के प्रकाश से वह स्थान प्रकाशमान होगया ।।२१।। फिर सब तत्त्वों के ज्ञाता शिवजी सती प्रसन्न करते हुए, हँस कर कहने लगे ।।२२।। हे प्रिये ! तुम्हारी प्रन्नता के लिए जो स्थान मैं निश्चत करूँगा, वहाँ मेघ न पहुँच सकेंगे ।।२३।। वर्षा-काल में भी हिमालय के शिखर के नीचे ही मेघ घूमते रहेंगे ।।२४।। और कैलाश के ऊपर तो कभी मेघ आते ही नहीं, नीचे ही रह जाते हैं ।।२५।। पुष्कर आवर्त्तक आदि मेघ जम्बू के मूल तक पहुँचते हैं, सुमेरु के शिखर पर नहीं चढ़ते ।।२६।। इतने पर्वतों में जिस पर तुम रहना चाहो उसे मुझे शीघ्र बताओ। हिमालय पर्वत में सोने के पंख वाले अनिल वृन्द नामक पक्षी अपने मधुर शब्दों के द्वारा तुम्हारे इच्छित विहार की लीलाओं को गावेंगे ।।२७-२८।।

सिद्धाङ्गनास्तेरचितासनाभवमिच्छन्तिचैवोपहृतंसकौतुकम् ।
स्वेच्छाविहारेमणिकुट्टिमेगिरौकुर्वन्तिचेष्यंतिफलादिद.नकैः ।।

फणीन्द्रकन्या गिरिकन्यकाश्च या नागकन्याश्च तुरङ्गममुख्यः।
सर्वास्तुनास्तेसततं सहायतांसमाचरिष्यंत्युनुमोदविभ्रमैः ॥३०
रूपं तदेवमतुलंवदनंमुचारु दृष्ट्वांगनानिजवपुर्निजकीतिसह्यम् ।
हेलानिजेवतुषिरूपगणेषुनित्यंकर्तारइत्यनिमिषेक्षणचारुरूपाः ।।
या मेनका पर्वतराजजाया रूपैर्गुणैः ख्यातवती त्रिलोके ।
सा चापितेत्र मनोऽनुमोदं नित्यं करिष्यत्यनुनाथनाद्यैः ॥३२
पुरं हि वर्गैर्गिरिराजवंद्यैः प्रीतिं विचिन्वद्भिरुदाररूपा ।
शिक्षासदातेगलुशोचितापिकार्यान्ऽन्वहंप्रीतियुता गुणाद्यैः ॥३३
विचित्रैः कोकिलालापामोदैः कुंजगणावृतम् ।
सदा वसंतप्रभवं गतुमिच्छमि किं प्रिये ॥३४
नानाबहुजलापूर्णसरः शीतसम वृतम् ।
पद्मिनीशतशोयुक्तमचलेन्द्र हिमालयम् ॥३५

वहाँ तुम्हारे इच्छित व्यवहार के समय सिद्धों की नारियाँ मणिजटित वेद रूप आसन की भूमि को कौतुक सहित भेंट करेंगी तथा विभिन्न प्रकार के फल आदि लाकर तुम्हें अर्पण करेंगी।२६। नाग कन्या, पर्वत कन्या, तुरङ्गमुखी किन्नरी यह सभी लीला-बिहार के समय श्रेष्ठ वचनों को कहकर तुम्हें प्रसन्न करेंगी। वहाँ की अत्यन्त सुन्दरी सुरनारियाँ तुम्हारे इस अनुपम सौन्दर्य और मनोहर मुख को देखकर अपने रूप-गुण की निन्दा करेंगी और तुम्हारी ओर एकटक देखती रहेंगी।३०-३१। पर्वतराज की पत्नी मेनका भी तुम्हारे मन को अनेक प्रकार से प्रसन्न करेगी और तुम्हारे अनुकूल रहेगी ॥३२॥ हिमालय की वन्दना करने वाले सब परिवारीजन और पुरजन तुम्हारे प्रति उदार और प्रीतिमय रहेंगे। तुम्हें कुछ सोच होगा तो समझायेंगे। तुम कोकिलाओं के अद्भुत आलाप और मोदमय कुंजो से युक्त तथा बसन्तोत्पत्ति वाले स्थान में जाओगे।३३-३४। अनेक जलों से सम्पन्न, सरस शीतयुक्त और सैकड़ों कमलनियों से सुशोभित अचल हिमालय हैं ॥३५॥

सर्वकामप्रदैर्वृक्षैः शाद्वलैः कल्पसञ्ज्ञकैः ।
सक्षण पश्य कुसुमान्यथाश्वकरिगोव्रजे ॥३६

प्रशांतश्वापदगणं मुनिभिर्यतिभिर्वृतम् ।
देवालये महामाये नानामृगगणैर्युतम् ॥३७
स्फटिकस्वर्णवप्राद्यै राजतैश्च विराजितम् ।
मानसादिसरोरत्नैरभितः परिशोभितम् ॥३८
हिरण्मयै रत्ननालै पङ्कजैर्मुकुलैर्वृतम् ।
शिशुमारैस्तथाऽसंख्यैः कच्छपैर्मकरैः करैः ॥३९
निषेवितं मञ्जुलैश्च तथा नीलोत्पलादिभिः ।
देवेशि तस्मान्मुक्तैश्च सर्वगंधैश्च कुङ्कुमैः ॥४०
लसद्गंधजलैःशुभ्रैरापूर्णैः स्वच्छकांतिभिः ।
शाद्वलैस्तरुणैस्तुंगैस्तीरस्थैरुपशोभितम् ॥४१
नृत्यद्भिरिव शाखोटैर्वर्जयंतं स्वसम्भवम् ।
कामदेवैः सारसैश्च मत्ताचक्रांगशोभितैः ॥४२

सम्पूर्ण कामनाओं के दाता शाद्वल तथा कल्प वृक्षों से युक्त पुष्पों को गोव्रज के समान क्षण भर के लिये देखो ।३६। यह मुनियों और यतियों से युक्त देवालय है, यहाँ के सभी हिंसक जीव शान्त स्वभाव के हैं तथा यह विभिन्न मृगों से सम्पन्न है ।३७। स्फटिक मणि और स्वर्ण आदि से रचित गौख आदि तथा रजत स्थानों से युक्त मानसरोवर आदि जलाशयों के रत्नों से सब प्रकार सुशोभित है ।३८। सुवर्ण और रत्नों की डंडी वाले कमल, मुकुलों के समूह, शिशुमार तथा असंख्य कच्छप और मकरों से व्याप्त है ।३९। वहाँ अत्यन्त उज्ज्वल नील कमल सुशोभित है, सब ओर से कुंकुम आदि की सुगन्ध फैल रही है ।४०। स्वच्छ कान्ति वाले सरोवर परिपूर्ण हैं, उनके जलों से सुगन्ध आ रही है, विशाल तरुण तरु तथा शाद्वलों से मेरुराज सुशोभित है ॥४१॥ यहाँ अखरोटों के वृक्षों की शाखायें इस प्रकार हिल रही हैं, जैसे वे नृत्य कर रहे हों, सारस तथा मदमत्त चकवा-चकवी भी यहाँ स्थित हैं ॥४२॥

मधुरारावविभिर्मोदकारिभिर्भ्रमरादिभिः ।
शब्दायमानं च मुदा कामोद्दीपनकारकम् ॥४३
वासवस्य कुबेरस्य यमस्य वरुणस्य च ।

अग्नेः कोणपराजस्य मारुतस्य परस्य च ॥४४

पुरीभिः शोभिशिखरं मेरोरुच्चैः सुरालयम् ।
रंभाशचीमेनकादिरं भोरुगणसेवितम् ॥४५

किं त्वमिच्छसि सर्वेषां पर्वतानां हि भूभृताम् ।
सारभूते महारम्ये संविहर्तुं महागिरौ ॥४६

तत्र देवी सखियुता साप्सरोगणमण्डिता ।
नित्यं करिष्यति शची तव योग्यां सहायताम् ॥४७

अथवा मम कैलासे पर्वतेंद्रे समाश्रये ।
स्थानमिच्छसि वित्तेशपुरीपरिविराजिते ॥४८

गङ्गाजलौघप्रयते पूर्णचन्द्रसमप्रभे ।
दरीषु सानुषु सदा ब्रह्मकन्याभ्युदोरिते ॥४९

भौंरे मधुर ध्वनि से गुंजार रहे हैं तथा कमोद्दीपन करने वाले सुन्दर शब्द सब ओर से हो रहे हैं ॥४३॥ इन्द्र,यम,वरुण,अग्नि,कुवेर, कोणपति, पवन आदि की नगरी ॥४४॥ उस मेरु-शिखर पर सुशोभित हैं,वहाँ सम्पूर्ण देवताओं का निवास है तथा रंभा, शची, मेनका आदि अप्सराओं से यह स्थान सुशोभित है ॥४५॥ हे देवि ! इन सब भूमियों के सारभूत अत्यन्त मनोहर महान् पर्वतों में विहार करने की तुम्हें इच्छा है ? ॥४६॥ वहाँ जाने पर सखियों और अप्सराओं सहित शची तुम्हारी सहायिका होंगी ॥४७॥ अथवा तुम्हारी इच्छा सब पर्वतों से ऊँचे तथा कुबेरपुरी के भी ऊपर स्थित पर्वतराज कैलाश में निवास करने की है ? ॥४८॥ जहाँ पूर्ण चन्द्रकान्ति के समान नित्य जल प्रवाहित है, कन्दराओं में ब्रह्म कन्यायें सुन्दर गान करती रहती हैं ॥४९॥

नानामृगगणैर्युक्ते पद्माकाशतावृते ।
सर्वैं गुणैश्च सद्वस्तु सुमेरोरपि सुन्दरि ॥५०

स्थानेष्वेतेषु यत्रापि तवांतःकरणे स्पृहा ।
टैद्रुतं मे समाचक्ष्व वासकर्तास्मि तत ते ॥५१

इती रते शंकरे तदा दाक्षायणी शनैः ।
दमाह महादेवं लक्षणं स्वप्रकाशनम् ॥५२

हिमाद्रावेव वसथुमहमिच्छे त्वया सह ।
नचिपात्कुरु संवासं तस्मिन्नेव महागिरौ ॥५३
अथ तद्वाक्यमाकर्ण्य हरः परममोहितः ।
हिमाद्रिशिखरं तुङ्गं दाक्षायण्या समं ययौ ॥५४
सिद्धांगनागणयुतमागम्यं चैव पक्षिभिः ।
अगमच्छिखरं रम्य सरसीवनराजितम् ॥५५
विचित्ररूपैः धमलैः शिखरं रत्नकबुरम् ।
बालार्कसदृशं शम्भुराससाद सतीसखः ॥५६

जो अनेक मृग समूहों और सैकड़ों कमलों से व्याप्त, सर्वगुण श्रेष्ठ सुमेरु हैं, वह भी सुन्दर स्थान है ॥५०॥ देवि ! इनमें से जिस स्थान को कहो, वहीं वृक्षादि से सुरम्य स्थान देखकर निवास करें ॥५१॥ ब्रह्माजी बोले कि शिवजी ने जब इस प्रकार कहा तब सती शिवजी के समक्ष धीरे-धीरे अपने निवास स्थान का लक्षण कहने लगीं ॥५२॥ सती ने कहा—हे शिवजी ! मैं आपके साथ हिमालय में निवास करना चाहती हूँ, आप उसी महापर्वत में शीघ्र चल कर निवास कीजिए ॥५३॥ ब्रह्माजी ने कहा—सती की बात सुनकर मोहित हुए शिवजी सती के सहित हिमालयके उच्च शिखर में पहुंचे ॥५४॥ जो वन सिद्धों की नारियों से सेवित हैं, जहाँ पक्षियों की भी पहुँच नहीं है, उस कमलों से सुशोभित पर्वत के मनोहर शिखर पर पहुँच गये ॥५५॥ वह शिखर विचित्र रूप वाले कमलों से चित्रित था । प्रातःकालीन सूर्य के समान दीप्तिमान उस शिखर पर शिवजी सती के सहित पहुँचे ॥५६॥

स्फटिकाभ्रमये तस्मिन् शाद्वलद्रुमराजिते ।
विचित्रपुष्पावल्लिभिः सरसीभिश्च संयुते ॥५७
प्रफुल्लतरुशाखाग्रं गुञ्जद्भ्रमरसेवितम् ।
पंकेरुहैःप्रफुल्लैश्च नीलोत्पलचयैस्तथा ॥५८
शोभितं चक्रवाकाद्यैः कादंबैर्हंसशङ्कुभिः ।
प्रमत्तसारसैः क्रौंचैर्नीलस्कन्धैश्च शब्दितैः ॥५९

पुंस्कोकिलानां निनदैर्मधुरैर्गणसेवितैः ।
तुरङ्गवदनैः सिद्धैरप्सरोभिश्च गुच्छकैः ॥६०
विद्याधरीभिर्देवीभिः किन्नरीभिर्विपारितम् ।
पुरं ध्रीभिःपार्वतीभिः कन्याभिरभिसङ्गतम् ॥६१
विपञ्चीतांत्रिकामत्तमृदङ्गपटहस्वनैः ।
नृत्यद्भिरप्सरोभिश्च कौतुकैस्थैश्च शोभितम् ॥६२
देविकाभिर्दीर्गिकाभिर्गंधिभिः सुसमावृतम् ।
लफुल्लकुसुमै नित्यं सुकुञ्जरुपशोभितम् ॥६३

वह स्फटिक मणि और अभ्रमय शाद्वल वृक्षों से सुशोभित विचित्र पुष्प-राजी और कमलनियों से सम्पन्न था ।५७। प्रफुल्लित वृक्षों की अगली शाखा पर गुंजारते हुए भ्रमरों से सेवित तथा पंकरुह और नील-कमल के समूह से सम्पन्न ।५८। चक्रवाक, कादम्ब, हंस शंकु मदमत्त सारस तथा नीले कंठ वाले क्रौंच पक्षियों से युक्त एवं शब्दायमान ।५६। कोयलों के मधुर आलाप तथा तुरङ्ग बदन वाले सिद्ध और अप्सराओं से युक्त था ।६०। विद्याधरी देवी और किन्नरियों के बिहार से युक्त तथा पहाड़िन स्त्रियों और कन्याओं से सम्पन्न ।६१। मृदङ्ग, पटह, बीणा और सितार के स्बरों पर नृत्य करती हुई अप्सराओं के कौतुकों से युक्त ।६२। देवताओं द्वारा निर्मित बावड़ी और उनसे आती हुई कमल की गंध से युक्त तथा प्रफुल्लित पुष्पों वाले वृक्षों की कुंजों से सुशोभित ।६३।

शैलराजपुराभ्यर्णे शिखरे वृषभध्वजः ।
सह सत्या चिरं रेमे एवं भूतेषु शोभनम् ॥६४
तस्मिन् स्वर्ग समे स्थाने दिव्यमानेन शङ्करः ।
दशवर्षसहस्राणि रेमे सत्यासमं मुदा ॥६५
स कदाचित्ततः स्थानादन्यद्याति स्थलं हरः ।
कदाचिन्मेरुशिखरं देवीदेववृतं सदा ॥६६
द्वीपान्नाना तथोद्यानवनानि वसुधातलम् ।
गत्वा गत्वा पुनस्तत्राभ्येत्य रेमे सतीसुखम् ॥६७
न यज्ञे स दिवरात्रौ क ब्रह्मणि तपः समम् ।

सत्यां हि मनसा शंभुः प्रीतिमेव चकार ह ।।६८
एवं महादेवमुखं सत्यपश्यत्स्म सर्वदा ।
महादेवोऽपि सर्वत्र सदाऽद्राक्षीत्सतीमुखम् ।।६९
एवनन्योन्यसंसर्गादनुरागमहीरुषम् ।
वर्द्धयामासतु कालीशिवौ भावांबुसेचनैः ।।७०

सब प्राणियों से सुशोभित शैलराज के उस श्रेष्ठ शिखर पर सती के सहित शिवजी बहुत समय तक स्मरण करते रहे ।६४। उस स्वर्ग जैसे स्थान में सती सहित शंकर अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक दस हजार देव वर्ष तक बिहार रत रहे ।।६५।। वे कभी उस स्थान से अन्य स्थान पर जाते और कभी देवी-देवताओं से युक्त मेरु शिखर पर भ्रमण करते ।६६। कभी पृथ्वी के अनेक द्वीप और दिव्य उत्तानों में विचरण करते हुए सती के साथ विहार-रत रहे ।६७। यज्ञ, तप, अपने रूप का चिन्तन आदि का त्याग कर शिवजी ने सती में ही मन को रमा लिया ।६८। इस प्रकार सती सदा शिवजी का मुख देखती और शिवजी सदा सती का मुख देखते रहते ते ।६९। ऐसे पारस्परिक अनुराग में रत शिव और सती ने भाव-रूपी जल का सिंचन कर प्रेम-रूपी वृक्ष की बृद्धि की ।७०।

* शिव का सती के प्रति मोक्ष शास्त्र कथन *

सुप्रसन्नं प्रभुं नत्वा सा दक्षतनया सती ।
उवाच सांजलिर्भक्त्या विनयावनता ततः ।।१
ज्ञातुमिच्छामि देवेश परं तत्वं सुखावहम् ।
यं न ससारदुःखाब्द्वै तरेज्जीवोऽजसा हर ।।२
यत्कृत्वा विषयी जीवः स लभेत्परमं पदमु ।
संसारी न भवेन्नाथ तत्वं वद कृपां कुरु ।।३
इत्यपृच्छत्सम सद्भक्त्या शंकरं सा सती मुने ।
आदिशक्तिर्महेशानी जीवोद्धाराय केवलम् ।।४
आकर्ण्य तच्छिवः स्वामी स्वेच्छयोपात्तविग्रहः ।
अवोचत्परयप्रीतिः सती योगविरक्तधीः ।।५
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि दाक्षायणि महेश्वरि ।

परं तत्वं तदेवानुशयी मुक्तो भवेद्यतः ॥६
परतत्वं विजानीहि विज्ञानं परमेश्वरि ।
द्वितीय स्मरणं यत्र नाहं ब्रह्मेति शुद्धधीः ॥७

एक समय दक्षसुता सती अपने प्रसन्न हुए स्वामी को प्रणाम कर भक्ति-सहित नम्र होकर बोली ॥१॥ हे देवेश ! मैं अब सुखदायक परम-तत्व को जाना चाहती हूं । हे शंकर ! जिससे यह जीव भव-बन्धन से मुक्त हो जाता है ॥२॥ विषयी मनुष्य जिसे पाकर परमपद प्राप्त कर लेता है और पुनः संसारी नहीं होता । आप कृपा करके उसी तत्व को मेरे प्रति कहिये ॥३॥ ब्रह्माजी ने कहा—सती ने भक्तिपूर्वक शिवजी से इस प्रकार प्रश्न किया और प्राणियों के उद्धार की इच्छा व्यक्त की ॥४॥ तब स्वेच्छा से शरीर धारण करने वाले शंकर ने यह बात सुनकर, योग से विरक्त बुद्धि होते हुए सती से कहा ॥५॥ शिवजी बोले—हे दक्षसुते ! जिस परमतत्व का ज्ञान प्राप्त कर यह अनुशयी जीव मोक्ष को प्राप्त होता है, उसे मैं तुम्हारे प्रति कहता हूँ, तुम श्रवण करो ॥६॥ हे महेशानि ! तुम विज्ञान को ही परमतत्व समझो । उसमें बुद्धिपूर्वक ब्रह्म का ही स्मरण किया जाता है, किसी अन्य का नही ॥७॥

तद्दुर्लभं त्रिलोकेस्मिंस्तज्ज्ञाता विरलः प्रिये ।
यादृशो यः स दासोऽहं ब्रह्म साक्षात्परात्परः ॥८
तन्माता मम भक्तिश्च भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ।
सुलभा मत्प्रसादाद्धि नवधा सा प्रकीर्तिता ॥९
भक्तौ ज्ञाने न वेदो हि तत्कर्तुः सर्वदा सुखम् ।
विज्ञानंन भवत्येव सति भक्तिविरोधिन ॥१०
भक्त्या हीनः सदाहं वै तत्प्रभावाद्गृहेष्वपि ।
नीचानां जातिहीनानां यामि देवि न संशयः ॥११
सा भक्तिर्द्विविधा देवि सगुणा निर्गुणा मता ।
वैधी स्वाभाविकी या या वरा सा त्ववरा स्मृता ॥१२
नैष्ठिक्यनैष्ठिकी भेदाद्द्विविधे हि ते ।
षड्विधा नैष्ठिकी ज्ञेया द्वितीयैकविधा स्मृता ॥१३

विहिताविहिताभेदात्तामनेकां विदुर्बुधाः ।
तयोर्बहुविधत्वाच्च तत्वं त्वन्यत्र वर्णितम् ॥१४

हे प्रिये ! इस तत्वज्ञान का ज्ञाता कोई विरला ही होता है, यह अत्यन्त दुर्लभ है, क्योंकि वह ब्रह्म परे से भी परे हैं, मैं उसका दास हूँ ॥८॥ उस विज्ञान की माता, भुक्ति मुक्ति की दात्री मेरी भक्ति है । परन्तु मेरी भक्ति भी मेरी ही कृपा से सुलभ होती है । उसके नौ प्रकार हैं भक्ति और ज्ञान में कोई भेद नहीं है । भक्ति करने वाला मनुष्य सदा सुखी होता है । जो मनुष्य भक्ति से विरोध करता है, उसे विज्ञान की प्राप्ति भी सम्भव नहीं है ।६ १०। मैं अपने भक्त के सदा आधीन रहता हूँ, भक्ति के प्रभाव से निम्न जाति वालों के घरों में भी जाता हूँ ॥११॥ वह भक्ति भी सगुण-निर्गुण के भेद से दो प्रकार की है । इसमें प्रथम श्रेष्ठ और दूसरी निम्न है ॥१२॥ दोनों प्रकार की भक्ति भी नैष्ठिकी के और अनैष्ठिकी के भेद से दो-दो प्रकार की हैं, इनमें भी मैष्ठिकी के छः प्रकार और अनैष्ठिकी का एक ही प्रकार है ॥१३॥ इसको विहित और अविहित भेद से ज्ञानी जन अनेक प्रकार की मनाते हैं । अनेक प्रकार की होने से उसका तत्व अन्यत्र कहा गया है ॥१४॥

ते नवांगेउभेज्ञेये वर्णिते मुनिभिः प्रिये ।
वर्णयामि नवांगानि प्रेमतः शृणु दक्षजे ॥१५
श्रवण कीर्तनं चैव स्मरणं सेवनं तथा ।
दास्यं तथाऽर्चनं देवि वंदनं मम सर्वदा ॥१६
सख्यंमात्मापणं चेति नबांगानि विदुर्बुधाः ।
उपांज्ञानि शिवे तस्या बहूनि कथितानि वै ॥१७
शृणु देबि नवांगानां लक्षणानि पृथक्-पृथक् ।
मम भक्तैर्मनो दत्वा भुक्तिमुक्तिप्रदानि हि ॥१८
कथादेर्नित्यसम्मानं कुर्वन्देहादिभिर्मुदा ।
स्थिरासनेन तत्पानं यत्तच्छ्रवणमुच्यते ॥१९
हृदाकाशेन संपश्यन् जन्मकर्माणि वै मम ।
प्रीत्योच्चोच्चारण तेषामेतत्कीर्तनमुच्यते ॥२०

व्यापकं देवि मां दृष्ट्वा नित्यं सर्वत्र सर्वदा ।
निर्भयत्वं सदा लोके स्मरणं तदुदाहृतम् ।।२१

मुनियों ने उन दोनों के अंग नौ प्रकार के बताये हैं, उन नौ अंगों के लक्षण पृथक-पृथक कहता हूँ, तुम उन्हें ध्यान से श्रवण करो ।१५। श्रवण, कीर्तन, स्मरण, सेवन, दास्य, अर्चन और वन्दन ।१६। सख्य तथा आत्म समर्पण—यह नौ अङ्ग विज्ञजन बताते हैं, और उपांग तो असंख्य हैं ।१७। अब नौ अंगों का लक्षण पृथक-पृथक कहता हूं, मेरा जो भक्त इनमें मन को लगायेगा, उसे भुक्ति-मुक्ति की प्राप्ति होगी ।१८। कथा आदि में देह आदि से सम्मान करना चाहिये, स्थिर आसन पर स्थित होकर उसका पान करे, इसे सुनना कहते हैं ।१९। हृदयाकाश में मेरे जन्म-कर्म को देखता हुआ प्रीतिपूर्वक उनका उच्चारण करे, यह कीर्तन कहा जाता है ।२०। मुझको नित्य, सर्वत्र सदा व्यापक मानकर भय-रहित रहकर लोक में सदैव विचरण करे ।२१।

अरुणोदयमारभ्य सेवाकालाञ्चिता हृदा ।
वाक्पाणिपादैस्तस्यार्चासेवन तदुदाहृतम् ।।२२
सदा सेव्यानुकूल्येन सेवनं तद्धि गोगणैः ।
हृदयामृतभागेन प्रियं दास्यमुदाहृतम् ।।२३
सदा भृत्यनुकूल्येन विधिना मे परात्मने ।
अर्पण षोडशानां वै पाद्यादीनां तदर्चनम् ।।२४
मंत्रोच्चारणध्यानाभ्यां मनसा वचसा क्रमात् ।
यदष्टागेन भूस्पर्श तद्वै वंदन मुच्यते ।।२५
मंगलामंगल यद्यत्करोतीतीश्वरो हि मे ।
सर्वं तन्मंगलायेति विश्वासः सख्यलक्षणम् ।।२६
कृत्वा देहादिकं तस्य प्रीत्यै सर्वं तदर्पणम् ।
निर्वाहाय च शून्यत्वं यत्तदात्मसमर्पणम् ।।२७
नवांगानानीति मद्भक्तेर्भुक्तिमुक्तिप्रदानि च ।
मम प्रियाणि चातीव ज्ञानोत्पत्तिकराणि च ।।२८

अरुणोदय से आरम्भ करे, सेवा काल में सदा हृदय से निर्भय रहता

हुआ स्मरण करे, इसे नाम स्मरण कहते हैं ।१२। सेवा परायण होकर अपनी इन्द्रियों को प्रभु सेवा में लगावे और हृदय से उनके अमृत का भोग करे और उनका चिन्तन करे, इसे दास्य करते हैं ।२३। भृत्य के समान सदैव मेरी अनुकूलता करे और षोडश प्रकार से मेरी पूजा करे तथा पाद्य अर्ध्य दे, इसे अर्चन कहा गया है ।२४। मन वचन कर्म के द्वारा मन्त्रोच्चारण तथा ध्यान करे और आठों अंगों से पृथिवी का स्पर्श करे, इसे वन्दना कहते हैं ।२५। मङ्गल या अमङ्गल जो कुछ भी ईश्वरेच्छा से होता है, वह सब मेरे लिए मङ्गल ही है, इस प्रकारका विश्वास सख्य कहा गया है ।२६। देहादि को प्रीतिपूर्वक अर्पण कर देना और स्वयं शून्यत्व का भाव मानना, इसे आत्म-समर्पण कहा गया है ।२७। मेरी भक्ति के यह नवाँग भुक्ति मुक्ति प्रदायक तथा ज्ञानोत्पादक हैं और मेरे लिए अत्यन्त प्रिय हैं ।।२८।।

इत्थं सांगोपांगभक्तिर्मम सर्वोत्तमा प्रिये ।
ज्ञानवैराग्यजननी मुक्तिदासी विराजते ।।२९
सर्वकर्मफलोत्पत्तिः मर्वदा त्वत्समप्रिया ।
यच्चियत्ते सा स्थिता नित्यं सर्वद, सोऽति मत्प्रियः ।।३०
त्रैलोक्ये भक्तिसदृशः पंथा नास्ति सुखावहः ।
चतुर्युगेषु देवेशि कलौतु सुविशेषतः ।।३१
कलौ प्रत्यक्षफलदा भक्तिः नवंयुगेष्वपि ।
यत्प्रभावादहं नित्यं तद्वशो नाम संशयः ।।३२
यो भक्तिमान्पुमाँल्लोके सदाहं तत्सहायकृत् ।
बिघ्नहर्ता रिपुस्तस्य दण्ड्यो नात्र च संशयेः ।।३३
भक्तहेतोरहं देवि कालं क्रोधपरिप्लुतः ।
अहं वह्निता नेत्रभवेन निजरक्षकः ।।३४
किं बहूक्तेन देवेशि भक्ताधीनःसदा ह्यहम् ।
तत्कर्तुः पुरुषस्यातित्रशगो नात्र सशयः ।।३५
इत्थमाकर्ण्य भक्तेस्तु महत्वं दक्षजा सती ।
जहर्षातीव मनसि प्रणनाम शिवं मुदा ।।३६

इस प्रकार की सांगोपाँग भक्ति ज्ञान वैराग्य को उत्पन्न करने वाली एवं परमश्रेष्ठ है। मुक्ति सदा इसकी दासी है ॥ ॥२९॥ इसी के द्वारा सम्पूर्ण कर्म और फल उत्पन्न होते हैं, मेरे लिए यह सदैव तुम्हारे समान ही प्रिय है, जिसके चित्त में इसका वास है, वह मेरा प्रीति भाजन है। ॥३०॥ भक्ति के समान अन्य कोई मार्ग त्रैलोक्य में सुख का देने वाला नहीं है यह चारों युगों में प्रधान मानी गयी है, परन्तु कलियुग में विशेष रूप से हितकारिणी है ॥३१॥ सभी युगों, विशेष कर कलियुग में भक्ति विशेष फल के देने वाली है। इसका प्रत्यक्ष फल होता देखकर मैं सदा इसके वश में रहता हूँ ॥३२॥ लोक में जो पुरुष भक्ति-युक्त होता है मैं सदा उसकी सहायता करता हूँ। उसके यहाँ जो कोई विघ्न उपस्थित करता है, मैं उसके लिए शत्रु हो जाता हूँ ॥३३॥ भक्तों के निमित्त मैं ही काल रूप क्रोध से व्याप्त हूँ। भक्तों के हितार्थ ही मैंने अपने नेत्रों की अग्नि से उसे भस्म कर डाला था ॥३४॥ मैं सदा भक्ति के आधीन हूँ, जो पुरुष भक्ति करता है उसके वश में रहता हूँ ॥३५॥ ब्रह्माजी ने कहा कि शिवजी से इस प्रकार भक्ति का माहात्म्य श्रवण कर सती अत्यन्त प्रसन्न हुई और प्रेत सहित अपने स्वामी को प्रणाम किया ॥३६॥

॥ दक्ष और शिव के विरोध का कारण ॥

पुराऽभवच्च सर्वेषामध्वरो विधिना महान् ।
प्रयागे समवेतानां मुनीमां च महात्मनाम् ॥१
तत्र सिद्धाः समाख्यातः सनकाद्याः सुरर्षयः ।
सप्रजापतयो देवा ज्ञानिनो ब्रह्मदर्शिनः ॥२
अहं समागतस्तत्र परिवारसमन्वितः ।
निगमैरागमैर्युक्तो मूर्तिमद्भिर्महाप्रभैः ॥३
समाजोऽभूद्विचित्रो हि तेषामुत्सवसंयुतः ।
ज्ञानवादोऽभवत्तत्र नानाशास्त्रसमुद्भवः ॥४
तस्मिन्नवसरे रुद्रः सभवानीगणः प्रभुः ।
त्रिलोकहितकृत्स्वामी तत्रागात्सूतिकृन्मुने ॥५
दृष्ट्वा शिवं सुराः सर्वे सिद्धाश्च मुनयस्तथा ।

अनमंस्तं प्रभुं भक्त्या तुष्टुवुश्च तथा ह्यहम् ।६।
तस्थुश्शिवाज्ञया सर्वे यथास्थानं मुदान्विताः ।
प्रभुदर्शनसतुष्टा वर्णयन्तो निजं विधिम् ।७।

ब्रह्माजी ने कहा—प्राचीन में प्रयागराज में एकत्र हुए मुनियों द्वारा एक महान् यज्ञ हुआ ।१। उसमें सिद्ध, परमर्षि, देवर्षि, सनकादि, प्रजापति, ब्रह्मज्ञानी तथा देवगण एकत्र हुए ।२। मैं भी सपरिवार वहाँ गया, मेरे साथ निगमागम भी साकार रूप में वहाँ पहुँचे ।३। वहाँ उत्सव के सहित वह विचित्र समाज हुआ और अनेक शास्त्रों का ज्ञान तथा वाद उपस्थित हुआ ।४। उसी अवसर पर पार्वतीपति भी अपने गणों सहित त्रैलोक्य के हित साधनार्थ वहाँ आये ।५। शिवजी को देखते ही सब सिद्धों, देवताओं ऋषियों और मुनियों ने उन्हें अपना प्रभु मानते हुए प्रणाम किया और मैं भक्ति पूर्वक उनकी स्तुति करने लगा ।६। उस समय शिवजी की आज्ञा से सभी अपने-अपने स्थान पर बैठ गये और उनके दर्शन करके अपने-अपने भाग्य की सराहना करने लगे ।७।

तस्मिन्नवसरे दक्षः प्रजापपितिः प्रभुः ।
आगमत्तत्र सुप्रीतः सुच्चस्वी यदृच्छया ।८।
मां प्रणम्य स दक्षो हि न्युष्टस्तत्र मदाज्ञया ।
ब्रह्माण्डाधिपतिर्मान्य मानी तत्वबसिर्मुखः ।९।
स्तुतिभिः प्रणिपातैश्च दक्षः सर्वैः सुरर्षिभिः ।
पूजितो वरतेजस्वी करौ वद्ध्वा विनम्रकैः ।१०।
नानाविहारकृन्नाथः स्वतंत्रः परमोतिकृत् ।
नानमत्तां तदा दक्षं स्वासनस्थो महेश्वरः ।११।
दृष्ट्वाऽनतं हरं तत्र स मे पुत्रोऽप्रसन्नधीः ।
अकुप्यत्सहसा रुद्रे तदा दक्षः प्रजापतिः ।१२।
क्रूरदृष्ट्या महागर्वो दृष्ट्वा रुद्रं महाप्रभुम् ।
सर्वान्संश्रावयन्नुच्चैरवोचज्ज्ञानवर्जितः ।१३।
एते हि सर्वे च सुरासुरा भृशं नमति मां विप्रवरास्तथर्षयः ।
कथं ह्यसौ दुजनवन्महामना त्वभूत्तु यः प्रेतपिशाचसवृतः ।।

उसी समय प्रजापतियों के भी पति अत्यन्त तेजस्वी दक्ष वहाँ प्रसन्नता पूर्वक आये ।८। ब्रह्माण्ड के अधिपति होने के अभिमान भर हुए दक्ष ने केवल मुझे प्रणाम किया और मेरी आज्ञा से वहाँ बैठ गये ।६। उस समय सभी देवताओं और ऋषियों ने उन अत्यन्त तेजस्वी दक्ष का स्तुति और प्रणामों से सत्कार किया तथा विनम्रतापूर्वक करबद्ध प्रार्थना की ।१०। परन्तु अनेक प्रकार की लीलाओं से युक्त परम स्वतन्त्र शंकर अपने आसन पर बैठे रहे, उन्होंने दक्ष को प्रणाम नहीं किया ।११। शिवजी को प्रणाम न करता देखकर मेरा पुत्र दक्ष अत्यन्त रुष्ट हुआ और शिवजी पर क्रोध करने लगा ।१२। और अत्यन्त अहंकारपूर्वक उसने क्रूर दृष्टि से शिवजी को देखा तथा उसको सुनाते हुए ज्ञानरहित वाक्य कहे ।१३। दक्ष ने कहा – यह सुर, असुर, विप्र ऋषि सब मुझे देखकर प्रणाम करते हैं, परन्तु प्रेत-पिशाचों से घिरा हुआ, अत्यन्त अभिमानी यह दुर्जन के समान कैसे बैठा रहा ? ।१४।

श्मशानवासी निरपत्रयो ह्ययं कथं प्रणामं न करोति मेऽधुना ।
लुप्तक्रियो भूतपिशाचसेवितो मत्तोऽविधो नीतिविदूषकः सदा ।।
पाखंडिनो दुर्जनपापशीला दृष्ट्वा द्विजं प्रोद्धतनिंदकाश्च ।
वध्वा सकासक्तरतिप्रवीणस्तस्मादमुं शप्तुमहं प्रवृतः ।१६।
इत्येवमुक्त्वा स महाखलस्तदा रुषान्वितो रुद्रमिदं ह्यवोचत् ।
शृण्वत्वती विप्रवरास्तथा सुरा वध्यं हि मे चार्हथ कर्तुमेतम् ।।
रुद्रो ह्यय यज्ञवहिष्कृतो मे वर्णेष्वतीतोऽय विवर्णरूपः ।
देवैर्न भाग लभतां सहैव श्मशानवासी कुलजन्महीनः ।१८।
इति दक्षोक्तमाकर्ण्य भृग्वाद्या बहवो जनाः ।
अगर्हयन् दुष्टसत्वं रुद्र नत्वाऽमरै बहवो जनाः ।१६।
नन्दी निशम्य तद्वाक्यं लोलाक्षोऽतिरुषान्वितः ।
अब्रवीत्वरितं दक्षं शापं दातुमना गण ।२०।

इस श्मशानसेवी, निर्लज्ज, क्रियाहीन भूत पिशाचों से सेवित, नीति की हँसी उड़ाने वाले ने मुझे प्रणाम क्यों नहीं किया ।१५। इस पाखण्डी, दुर्जन, विप्र निन्दक को सदैव पत्नी में आसक्त रहने के

कारण शाप देने को उद्यत हुआ हूँ ।१६। ब्रह्माजी ने कहा कि इतना कहकर दुष्ट प्रजापति ने क्रोधपूर्वक रुद्र के प्रति कहा—हे विप्रो, देवताओ ! सब सुनो, यह वध के योग्य है ।१७। मैं इसे यज्ञ से बाहर करता हूँ, वर्णों से भी बाहर, विवर्ण रूप, यह आज से देवताओं में यज्ञ भाग प्राप्त न करेगा, क्योंकि यह श्मशान में रहने वाला और कुल-जन्म से हीन है ।१८। ब्रह्माजी बोले कि भृगु आदि अनेक ऋषि दक्ष के वचन सुनकर रुद्र को देवताओं के समान जानकर निन्दा करने लगे ।१९। परन्तु नन्दी के नेत्र लाल हो गए और उसने दक्ष को शाप देते हुए कहा ।२०।

रे रे शठ महामूढ दक्ष दुष्टमते त्वया ।
यज्ञबाह्यो हि मे स्वामी महेशो हि कृतः कथम् ।२१।
यस्य स्मरणमात्रेण भवंति सफला मखाः ।
तीर्थानि च पवित्राणि सोऽयं शप्तो हरः कथम् ।२२।
वृथा ते ब्रह्मचापल्याच्छप्तोऽयं दक्ष दुर्मते ।
वृथोपहसितश्चैवादुष्टो रुद्रो महाप्रभुः ।२३।
येनेदं पाल्यते विश्वं सृष्टमंते विनाशिनम् ।
शप्तोऽयं स कथं रुद्रो महेशो ब्राह्मणाधम ।२४।
एवं निर्भत्सितस्तेन नन्दिना हि प्रजापतिः ।
नन्दिनं च शशापाथ दक्षो रोषसमन्वितः ।२५।
यूयं सर्वे रुद्रगणा वेदबाह्या भवंतु वे ।
वेदमार्गपरित्यक्तास्था त्यक्ता महार्षिभिः ।२६।
पाखडवादनिरताः शिष्टाचारबहिष्कृताः ।
मदिरापाननिरता जटाभस्मास्थिधारिणः ।२७।
इति शप्तास्तथा तेन दक्षेण शिवकिंकरा ।
तच्छ्रुत्वातिरुषाविष्टोऽभवन्नन्दी शिवप्रियः ।२८।

नन्दीश्वर ने कहा—अरे महामूढ़ दक्ष ! तूने मेरे स्वामी महेश्वर को यज्ञ से किस कारण निकाल दिया है ? ।२१। जिनके स्मरण करने से ही यज्ञ सफल होते हैं और तीर्थ भी पवित्र हो जाते हैं, उन भगवान् शंकर को तूने शाप कैसे दिया ? ।२२। हे कुबुद्धि वाले दक्ष ! तूने चपलता से

शंकर को व्यर्थ ही शाप दिया है । तूने इन सरल हृदय वाले महाप्रभु की व्यर्थ ही हँसी उड़ाई है ।२३। जो इस संसार को पालन करते और अन्त में विनाश करते हैं, उस रुद्र को तूने कैसे शाप दिया है ।२४। इस प्रकार नन्दीश्वर द्वारा प्रजापति की भर्त्सना किये जाने पर दक्ष क्रोध में भर गया और उसने नन्दी को भी शाप दिया ।२५। दक्ष ने कहा—तुम सभी रुद्रगण वेद से बाहर होंगे तथा महर्षियों द्वारा भी तुम्हारा त्याग किया जायगा ।२६। तुम पाखण्डी, अशिष्ट, मदिरा पीने वाले तथा जटा, भस्म और अस्थियों के धारण करने वाले होंगे ।२७। ब्रह्माजी ने कहा कि दक्ष ने जब इस प्रकार शिवगणों को शाप दिया तब उसे सुनकर नन्दी अत्यन्त क्रोधित हुए ।२८।

प्रत्युचाच दुतं दक्षं गर्वितं तं महाखलम् ।
शिलादतनयो नन्दी तेजस्वी शिववल्लभः ।२९।
रे दक्ष शठ दुर्बुद्धे वृथैव शिवकिंकराः ।
शप्तास्ते ब्रह्मचापल्याच्छिवतत्वमजानता ।३०।
भृग्वाद्यैर्दुष्टचित्तैश्च मूढः स उपहासिता ।
महाप्रभुर्महेशानो ब्राह्मणत्वादहंमते ।३१।
ये रुद्रविमुखाश्चात्र ब्राह्मणास्त्वादृशाः खलाः ।
रुद्रतेजः प्रभावत्वात्तेषां शापं ददाम्यहम् ।३२।
वेदवादरता यूयं वेदतत्वबहिर्मुखाः ।
भवंतु सततं विप्रा नान्यदस्तीति वादिनः ।३३।
कामात्मानः स्वर्गपराः क्रोधलोभमदान्विताः ।
भवंतु समतं विप्रा भिक्षुका निरपत्रपाः ।३४।
वेदमार्गं पुरस्कृत्या ब्राह्मणः शूद्रयाजिनः ।
दरिद्रा वै भविष्यति प्रतिग्रहरताः सदा ।३५।

उस अहंकारी दुष्ट दक्ष से उस शिलादसुत नन्दी ने शीघ्रता से कहा कि अरे दुर्बुद्धि वाले दक्ष ! तू शिव-तत्व से अज्ञान है । तूने ब्रह्म-चपलता से शिवगणों को व्यर्थ ही शाप दिया ।३०। तूने दुष्ट मन वाले भृगु आदि से उपहास कराया और ब्राह्मणत्व अहंकार में

भर कर महाप्रभु शंकर का निरादर किया ।३१। तेरे समान रुद्र से विमुख दुष्ट ब्राह्मणों को मैं रुद्र के तेज प्रभाव से शाप देता हूँ ।३२। तुम वेद-वाद परायण होकर भी वेद तत्व का ज्ञान न पा सकोगे । 'कुछ नहीं है' ऐसा ही निरन्तर कहने वाले होंगे ।३३। तुम कामना से ही अनुष्ठान करोगे स्वर्ग की इच्छा वाले, लोभ, मद, क्रोध से युक्त, निर्लज्ज तथा भिक्षा माँगने वाले होंगे ।३४। वेद-मार्ग की दुहाई देकर कुयज्ञ कराओगे और कुदान लेने वाले दरिद्री होगे ।३५।

असत्प्रतिग्रहाश्चैव सर्वे निरयगामिनः ।
भविष्यंति सदा दक्ष केचिद्वै ब्रह्मराक्षसाः ।३६।
यश्शिवं सुरसामान्यमुद्दिश्य परमेश्वरम् ।
द्रुह्यत्यजौ दुष्टमतिस्तत्वतो विमुखो भवेत् ।३७।
कूटधर्मेषु गेहेषु सदा ग्राम्यसुकेच्छया ।
कर्मतंत्रं वितनुता वेदवादं च शांश्वतम् ।३८।
बिनष्टानदकमुखो विस्मृतात्मगतिः पशुः ।
भ्रष्टकर्मानियरतो दक्षो बस्तमुखोऽचिरात् ।३९।
शप्तास्ते कोपिना तत्र नंदिना ब्राह्मणा यदा ।
हाहाकारो महानासीच्छप्तो दक्षेण चेश्वरः ।४०।
तदाकर्ण्याहमत्यंतमर्निदं मुहुर्मुहुः ।
भृग्वादोनपि विप्रांश्च वेदसृट् शिवतत्ववितृ ।४१।
ईश्वरोऽपि वचः श्रुत्वा नंदिनः प्रहसन्निव ।
उवाच मधुरं वाक्यं बोधयंस्त सदाशिवः ।४२।

तुम सत्य रहित प्रतिग्रह ग्रहण करने के कारण नरकगामी होगे और इनमें भी कोई-कोई तो ब्रह्म राक्षस बनेगा ।३६। जिन भगवान् शंकर को तुम सामान्य देवता समझते हो, उनसे द्रोह करने वाला दुष्ट बुद्धि तथा तत्व से विमुख होगा ।३७। शंकर-द्रोही कूट-धर्म में रत रहकर घर में पड़े रहेंगे और ग्राम्य सुख की कामना करेंगे तथा कर्म-तन्त्र में लगकर वेद पर विवाद करते रहेंगे ।३८। इनके आनन्द का नाश होगा, अपनी गति का ज्ञान विस्मृत हो जाने से पशु रूप होंगे ।

कर्मनीति से विमुख होने वाले इस दक्ष का मुख बकरे के समान हो जायगा।३९। जिस समय क्रोधपूर्वक नन्दीश्वर ने ब्राह्मणों को और दक्ष को शाप दिया, उस समय सर्वत्र महान् हाहाकार मच गया।४०। यह सुनकर मैंने दक्ष तथा भृगु आदि ब्राह्मणों की इसलिए निन्दा की कि उन्होंने वेद और शिवरत्न का ज्ञान होते हुए भी ऐसा किया।४१। नन्दी के इन वचनों को सुनकर शंकर हँसे और उसे समझाते हुए कहने लगे।४२।

शृणु नंदिन् महाप्राज्ञ न कर्तु क्रोधमर्ह सि।
वृथा शप्तं ब्रह्मकुलं मत्वा शप्तं च मां भ्रमात्।४३।
वेदो मंत्राक्षरमयः साक्षात्सूक्तमयो भृशम्।
सूक्ते प्रतिष्ठितो ह्यात्मा सर्वेषामपि देहिनाम्।४४।
तस्मादात्मविदो नित्यं त्वं मा शप रुषान्वितः।
शप्या न वेदाः केनापि दुर्द्धियाऽपि कदाचन।४५।
अहं शप्तो न चेदानीं तत्वतो बोद्धमर्ह सि।
शान्तो भव महाधीमन् सनकादिविबोधकः।४६।
यज्ञोऽहं यज्ञकर्माहं यज्ञांगानि च सर्वशः।
यज्ञात्मा यज्ञनिरतो यज्ञवाह्योऽहमेव वै।४७।
कोऽयं कस्त्वमिमे के हि सर्वोऽहमपि तत्वतः।
इति बुद्धया हि विमृश वृथा शप्तास्त्वया द्विजाः।४८।
तत्वज्ञानेन निर्हृत्य प्रपंचरचनो भव।
बुद्धःस्वस्थो महाबुद्धे नन्दिन् क्रोधादिवर्जितः।४९।

शंकर ने कहा—हे नन्दी! हे महाप्राज्ञ! तुमको क्रोध करना उचित नहीं है। तुमने भ्रम से मुझे शाप देता हुआ देखकर ब्रह्मकुल को व्यर्थ ही शाप दे डाला।४३। वेद मन्त्राक्षर युक्त हैं तथा सूक्त में सभी देहधारियों की आत्मा प्रतिष्ठित है।४४। इसलिए आत्मज्ञानी होकर तुम क्रोधवश शाप मत दो, वेद कभी किसी दुर्बुद्धि से भी शाप के योग्य नहीं है।४५। तुम तत्ज्ञान से यह समझ सकते हो कि मैं कभी शापित नहीं हो सकता। हे बुद्धिवन्त! तुमने सनकादि को ज्ञान दिया था, तुम शान्त होओ।४६। यज्ञ, यज्ञ के कर्म, यज्ञ के अङ्ग, यज्ञ की आत्मा

यज्ञ में रत, यज्ञ से बाहर सभी में मैं व्याप्त हूँ ।४७। तुम सब कौन हो ? तत्व से विचार कर देखो तो मैं ही हूँ और ऐसा विचार करने से ज्ञात होगा कि ब्राह्मणों को शाप व्यर्थ ही दिया गया ।४८। इस प्रपंच को यत्वज्ञान से जानकर शान्त होओ । क्रोध को त्याग कर स्वस्थ होओ और सम्पूर्ण रहस्य को समझों ४६।

एवं स बोधितस्तेन शम्भुना नन्दिकेश्वरः ।
विवेकपरमो भूत्वा शांतोऽभूत्क्रोधवर्जितः ।५०।
शिवोपि तं प्रबोध्याशु स्वगण प्राणवल्लभम् ।
सगणः स ययौ तस्मात्स्वस्थानं प्रमुदान्वितः ।५१।
दक्षोऽपि स रुषाऽऽविष्टस्तैर्द्विजैः परिवारितः ।
स्वस्थानं च ययौ चित्ते शिवद्रोहपरायणः ।५२।
रुद्रं तदानीं परिशप्यमानं संस्मृत्य दक्षः पपया रुषाऽन्वितः ।
श्रद्धां विहायैव स मूढबुद्धिर्निन्दापरोऽभूच्छिवपूजकानाम् ।५३।
इत्युक्तो दक्षदुर्बुद्धिः शंभुना परमात्मना ।
परां बुद्धिषणां तस्य शृणु तात वदाम्यहम् ।५४।

ब्रह्माजी ने कहा—जब भगवान् शंकर ने इस प्रकार नन्दीश्वर को समझाया तब उन्हें परम बोध हुआ और क्रोध को छोड़कर वे शान्त हुए ।५०। इस प्रकार अपने प्रिय गण को समझा कर शिवजी गणों सहित उस स्थान से चले गये ।५१। तथा दक्ष भी मन में शिव के प्रति द्रोह धारण किए ब्राह्मणों सहित क्रोधपूर्वक अपने स्थान को गये ।५२। इस प्रकार शंकर को शाप देकर अत्यन्त क्रोध में भरे हुए दक्ष ने मूर्खता वश शिवपूजकों की निन्दा करना प्रारम्भ किया ।५३। दुर्बुद्धि दक्ष की शंकर के प्रति धृष्टता का वर्णन किया गया, अब शंकर के द्वारा जो प्रतिक्रिया हुई उसे ध्यानपूर्व सुनो ।५४।

दक्ष यज्ञ में शिव भाग न होने पर दधीचि का विरोध

एकदा तु मुने तेन यज्ञः प्रारंभितो महान् ।
तत्राहूतास्तदा सर्वे दीक्षितेन सुरर्षयः ।१।
महर्षयोऽखिलास्तत्र निर्जराश्च समागताः ।

यद्यज्ञकरणार्थं हि शिवमायाविमोहिताः ।२।
अगस्त्यः कश्यपोऽत्रिश्च वामदेवस्तथा भृगुः ।
दधीचिर्भगवान् व्यासो भारद्वाजोऽथ गौतमः ।३।
पैलः पराशरो गर्गो भार्गवः ककुभः सितः ।
सुमंतुत्रिककंकाश्च वैशंपायन एव च ।४।
एते चान्ये च वहवो मुनयो हर्षिता ययुः ।
मम पुत्रस्य दक्षस्या सदाराः ससुता मखम् ।५।
तथा सर्वे सुरगणा लोकपाला महोदयाः ।
तथोपनिर्जराः सर्वे स्वोपकारबलान्विताः ।६।
सत्यलोकात्समानीतो नुनोऽहं बिश्वकारकः ।
ससुतः सपरीवारो मूर्त वेदादिसंयुनः ।७।

ब्रह्माजी ने कहा—हे नारदजी ! उस समय दक्ष ने एक महायज्ञ का आरम्भ किया और दीक्षा लेकर सभी महर्षियों को आमन्त्रित किया ।१। शिवमाया में मोहित देवगण और ऋषिगण यज्ञ कराने के लिए वहाँ पहुँचे ।२। अगस्त्य, कश्यप, अत्रि, वामदेव, भृगु, दधीचि, व्यास, भरद्वाज तथा गौतम ।३। पैल, पराशर, गर्ग, भार्गव, ककुपसित, सुमन्तत्रिक, कंक और वैशंपायन ।४। तथा अन्य अनेक मुनि प्रसन्न होकर वहाँ आये । यह सभी स्त्री-पुत्रों सहित दक्ष के यज्ञ में उपस्थित हुए ।५। इसी प्रकार सभी देवता, लोकपाल तथा अन्य देवता, उपकरण तथा बल से सम्पन्न वहाँ आये ।६। सत्यलोक से मुझे भी प्रार्थना करके आमन्त्रित किया गया और मैं भी सपरिवार तथा मूर्त वेद शास्त्रादि के सहित वहाँ पहुंचा ।७।

वैकुण्ठाच्च तथा विश्णुः संप्रार्थ्य विविधादरात् ।
सपार्षदपरीवारः समानीतो मखं प्रति ।८।
एवमन्ये समायाता दक्षयज्ञं विमोहिताः ।
सत्कृतास्तेन दक्षेण सर्वे ते हि दुरात्मना ।९।
भवनानि महार्हाणि सुप्रभाणि महांति च ।
त्वष्ट्रा कृतानि दिव्यानि तेभ्यो दत्तानि तेन वै ।१०।

तेषु सर्वेषु धिष्ण्येषु यथायोग्यं च संस्थिताः ।
सम्मानित अराजस्ते सकला विष्णुना मया ।११।
वर्त्तमाने महायज्ञे तीर्थे कनखले तदा ।
ऋत्विजश्च कृतास्तेन भृग्वाद्यश्च तपोधनाः ।१२।
अधिष्टाता स्वयं त्रिष्णुः सह सर्वमरुद्गणैः ।
अहं तत्राभदं ब्रह्मा त्रयीविधिनिदर्शकः ।१३।
तथैव सर्वे दिक्पाला द्वारपालाश्च रक्षकाः ।
सायुधाः सपरीवाराः कुतूहलकराः सदा ।१४।

अत्यन्त आदर सहित वैकुण्ठ से भगवान् विष्णु को बुलाया और वे भी अपने पार्षद तथा परिवार सहित पधारे ।८। अन्य अनेक महात्मा मोहित होकर दक्ष-यज्ञमें आये और उस शिवद्रोही दक्षने सभी का सत्कार किया ।९। विश्वकर्मा द्वारा निर्मित अत्यन्त प्रकाशमान भवन उन सबको रहने के लिए बता दिए ।१०। उन स्थानों में मेरे और नारायण के सहित सभी देवता सम्मानित होकर विराजमान हुए ।११। यह महायज्ञ उस कनखल तीर्थ में जैसे ही प्रारम्भ हुआ, उस समय भृगु आदि तपस्वी उसमें ऋत्विक् बने ।१२। सब मरुद्गणों के सहित विष्णु इसमें अधिष्ठाता हुए और त्रयी की विधि का ज्ञाता मैं उस यज्ञ में ब्रह्मा हुआ ।१३। इसी प्रकार सब दिक्पाल यज्ञमें द्वारपाल रूप से उसके रक्षक हुए, वे हाथों में आयुध धारण किए उस कुतूहल में सपरिवार संलग्नथे ।१४।

उपस्तस्थे स्वयं यज्ञः सुरूपस्तस्य चाध्वरे ।
सर्वे महानिश्रेष्ठाः स्वयं वेदधराऽभवन् ।१५।
तननूपादपि निजं चक्रे रूपं सहस्रशः ।
हविषां ग्रहणायाशु तस्मिन् यज्ञे महोत्सवे ।१६।
अष्टाशीतिसहस्राणि जुह्वन्ति सह ऋत्विजः ।
उद्गातारश्चतुःषष्टिसहस्राणि सुरर्षयः ।१७।
अध्वर्यवोऽथ होतारस्तावन्तो नारदादयः ।
सप्तर्षयः समा गाथाः कुर्वंतिस्म पृथक्पृथक् ।१८।
गंधर्वविद्याधरसिद्धसंधानादित्यसंधान् सयगणान् सयज्ञान् ।

संख्यावरान्नाग चरान् समस्तान् वव्रे स दक्षो हि महाध्वरे स्वे।१६।
द्विजर्षिराजर्षिसुरर्षिसंघा नृपाः समित्राः सचिवाः ससैन्याः ।
वसुप्रमुख्या गणदेवाश्च सर्वे वृतास्तेन मखोपवेत्त्राः ।२०।

दीक्षायुक्तस्तदा दक्षः कृतकौतुकमंगलः ।
भार्यया सहितो रेजे कृतस्वस्त्ययनो भृशम् ।२१।

उस स्थान पर यज्ञ भी अपने स्वरूप में स्थित हो गया तथा सब महामुनि स्वयं ही वेद के धारण करने बाले हुए ।१५। अग्नि ने अपने सहस्रों रूप धारण किए और उस महोत्सवयुक्त यज्ञ में आहुति ग्रहण करने लगे ।१६। अठासी हजार ऋषि आहुति दे रहे थे और चौंसठ हजार ऋषि उसमें उद्गाता थे ।१७। इतने ही अध्वर्य तथा होता थे तथा नारद आदि सप्तर्षि पृथक्-पृथक् गाथा गान कर रहे थे ।१८। गन्धर्व, विद्याधर तथा सिद्धों के समूह, आदित्यगण,यज्ञगण, समस्त संख्या वाले नाग तथा समस्त चर दक्ष द्वारा यज्ञ में वरण किये गए थे ।१६। ब्रह्मर्षि, राजर्षि, देवर्षि, मित्र, मन्त्री, तथा सेना सहित सभी राजा, वसु तथा गण देवताओ को दक्ष ने वरण किया था ।२०। कौतुक मंगल के उपरान्त दक्ष ने दीक्षा ग्रहण की तथा स्वस्तिवाचन के पश्चात् भार्या सहित सुशोभित हुआ ।२१।

तस्मिन् यज्ञे वृतः शंभुर्न दक्षेण दुरात्मना ।
कपालीति विनिश्चित्य तस्य यज्ञार्हता न हि ।२२।
कपालिभार्येति सती दयिता स्वसुतापि च ।
नाहूता यज्ञविषये दक्षेणागुणदर्शिना ।२३।
एवं प्रवर्तमाने हि दक्षयज्ञ महोत्सवे ।
स्वकार्यमग्नास्तत्रासन् सर्वे तेऽध्वरसंमताः ।२४।
एतस्मिन्नंतरे तत्राहृष्ट्वा वै शंकरं प्रभुम् ।
प्रोद्विग्नमानसः शैवोः दधीचिर्वाक्यमब्रवीत् ।२५।
सर्वे शृणुत मद्वाक्यं देवर्षिप्रमुखा मुदा ।
कस्मान्नै वागता शंभुरश्मिन् यज्ञे महोत्सवे ।२६।
एते सुरेशा मुनयो महत्तराः सलोकपालाश्च समागता हि ।

तथापियज्ञस्तु न शोभतेभृशपिनाकिना तेन महात्मना विना।२७।
येनैव सर्वाण्यपि मंगलानि भवति शंसन्ति महाविपश्चितः ।
सोऽसौ न दृष्टोऽत्रपुमान् पुराणो वृषध्वजो नीलगलः परेशः ।२८।

परन्तु उस दुरात्मा ने शिवजी को कपाली और अयोग्य कहकर उस यज्ञ में आमन्त्रित नहीं किया ।२२। यद्यपि उसको अपनी कन्या सती अन्यन्त प्रिय थी, किन्तु वह कपाली की पत्नी है, ऐसा विचार कर उसे भी यज्ञ में नहीं बुलाया ।२३। इस प्रकार दक्ष के यज्ञ महोत्सव का आरम्भ हुआ और सभी अध्वर्यु अपने कार्य में तत्पर हुए ।२४। तब वहाँ अपने स्वामी भगवान् शिव को न देखकर परम शैव्य दधीचि ने उद्विग्न मन से कहा ।२५। दधीचि ने कहा—सभी देवगण और ऋषिगण इस सभा में मेरा प्रश्न सुनें कि इस यज्ञ महोत्सव में भगवान् शंकर क्यों नहीं पधारे ? ।२६।सभी सुरेश्वर,मुनीश्वर और लोकपाल इस यज्ञ में उपस्थित हैं, परन्तु महात्मा शिवजी के अभाव में यह यज्ञ शोभा नहीं पा रहा है ।२७। महात्मा जन जिनके द्वारा सम्पूर्ण मंगल होना कहते हैं, उन्हीं पुराण पुरुष, वृषमध्वज, नीलकण्ड के यहाँ दर्शन नहीं हो रहे हैं ।२८।

अमंगलान्येव च मंगलानि भवन्ति येनाधिगताविं दक्ष ।
त्रिपंचकेचाप्यथ मंगलानि भवन्ति सद्यः परतः पुराणि ।२९।
तस्मात्वयैव कर्तव्यमाह्नानं परमेशितुः ।
त्वरितं व्रह्मणा वापि विष्णुना प्रभाविष्णुना ।३०।
इन्द्रेण लोकपालैश्च द्विजैः सिद्धैः सहाधुना ।
सर्वथाऽऽनयनीयोऽसौ शंकरो यज्ञपूर्त्तये ।३१।
सर्वैर्भद्भिर्गतव्यं नत्र देवो महेश्वः ।
दाक्षायण्या समं शम्भुमानयध्वं त्वरान्विताः ।३२।
तेन सर्वं पवित्रं स्याच्छम्भुना परमात्मना ।
अत्रागतेन देवेशाः सांबेन परमात्मना ।३३।
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या समग्रं सुकृतं भवेत् ।

तस्मात्सर्वं प्रयत्नेन ह्यानेतव्यो वृषध्वजः ।३४।
समागते शंकरेऽत्र पावनो हि भवेन्मखः ।
भविष्यत्यन्यथाऽपूर्णः सत्यमेतद्ब्रवीम्यहम् ।३५।

जिनके पाते ही सम्पूर्ण अमंगल मंगल रूप हो जाते है और आठों दिशायें मंगल से परिपूर्ण हो जाती हैं ।२९। इसलिए ब्रह्माजी या भगबान् विष्णु को भेज कर शीघ्र ही भगवान् शंकर को यहाँ बुलाना चाहिए ।३०। इन्द्र, लोकपाल या सिद्ध ब्राह्मणों के सहित यज्ञ पूर्ति के लिए शंकर को यहाँ शीघ्र लाना चाहिये ।३१। अथवा सभी उन महेश्वर के पास जाकर उन्हें दक्ष-सुता सहित यहाँ ले आवें ।३२। यदि वे देवेश यहाँ सती सहित आ गये तो यह यज्ञ पवित्र हो जायगा ।३३। उनके स्मरण करने अथवा नामोच्चारण करने से सब सुकृत होता है, उन बृषभध्वज को प्रयत्नपूर्वक यहाँ लाना चाहिए ।३४। मैं सत्य कहता हूँ कि शंकर के आने से ही यज्ञ पवित्र होगा, अन्वथा अपूर्ण ही रह जायगा ।३५।

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा दक्षो रोषसमन्वितः ।
उवाच त्वरितं मूढः प्रहसन्निव दुष्टधीः ।३६।
मूलं विष्णुर्देवतानां यत्र धर्मः सनातनः ।
समानीतो मया सम्यक् किमूनं यज्ञकर्मणि ।३७।
यस्मिन्वेदाश्च यज्ञाश्च कर्माणि विविधानि च ।
प्रतिष्ठितानि सर्वाणि सोऽसौ विष्णुरिहागतः ।३८।
सत्यलोकात्समायातो ब्रह्मा लोकपितामहः ।
वेदैः सोपनिषद्भिश्च विविधैरागमैः सहः ।३९।
तथा सूरगणैः साकमागतः सुरराट् स्वयम् ।
तथा यूयं समायाता ऋषयो वीतकल्मषाः ।४०।
ये ये यज्ञोचिता शांताः पात्रभूताः समागताः ।
वेदवेदार्थतत्वज्ञाः सर्वे यूयं दृढव्रता ।४१।

ब्रह्माजी ने कहा कि दधीचि के इस प्रकार वचन सुनकर दक्ष अत्यन्त

क्रोधित हुआ और अहंकार से हँसता हुआ कहने लगा।३६। विष्णु भगवान् देवताओं के मूल हैं और सनातन धर्म उन्हीं में स्थित है, मैंने उनको इस यज्ञ में बुला ही लिया है तो अब न्यूनता ही क्या रह गयी ?।३७। जिन विष्णु भगवान् में अनेक कर्म, यज्ञ और वेद भी स्थित हैं, वे यहाँ साक्षात् उपस्थित हैं।३८। सत्यलोक से लोक पितामह ब्रह्मा भी आ गये हैं तथा उपनिषद और आगम भी मूर्त रूप से उनके साथ यहाँ हैं।३९। सब देवताओं के सहित देवराज यहाँ हैं ही और आप सब पाप-रहित ऋषिगण भी यहाँ हैं।४०। यज्ञ में उचित पात्र रूप वेद वेदार्थ के तत्व-ज्ञाता एवं दृढ़वती जितने भी हैं, वे सभी यहाँ आ गये हैं।४१।

अत्रैव च किमस्माकं रुद्रेणापि प्रयोजनम् ।
कन्या दत्ता मया विप्र ब्रह्मणा नोदितेन हि ।४२।
हरोऽकुलीनोऽसौ विप्र पितृमातृविवर्जितः ।
भूतप्रेतपिशाचानां परेतिको दुरत्ययः ।४३।
आत्मसम्भावितो मूढः स्तब्धो मौनी समत्सरः ।
कर्मण्यस्मिन्न योन्योऽसौ नानीतो हि मयाऽधुना ।४४।
तस्मात्त्वयेदृशं वाक्यं पुनर्वाच्यं न हि क्वचित् ।
सर्वैर्भवद्भिः कर्त्तव्यो यज्ञो मे सफलो महान् ।४५।
एतच्छ्रुत्वा वचस्तस्य दधीचिर्वाक्यमब्रवीत ।
सर्वेषां श्रृण्वतां देवमुनीनां सारसंयुतम् ।४६।
अयज्ञोऽयं महाजातो विना तेन शिवेन हि ।
विनाशोऽपि विशेषेण ह्यत्र ते हि भविष्यति ।४७।
एवमुक्त्वा दधीचोऽसावेक एव विनिर्गतः ।
यज्ञावाटाच्च दक्षस्य त्वरितः स्वाश्रमं ययौ ।४८।
ततोऽन्ये शांकहा ये च मुख्याश्शिवमतानुगाः ।
निर्युयुः स्वाश्रमान् सद्यः शापं दत्त्वा तथैव च ।४९।

फिर रुद्र से हमें क्या प्रयोजन है ? ब्रह्माजी की आज्ञा से मैंने अपनी कन्या उनको दी थी।४२। परन्तु, हे ब्रह्मन् ! वे तो अकुलीन,

माता-पिता हीन तथा भूत:पिशाचों के अधिपत और दुर्गम हैं ।४३। आत्मा की सम्भावना से युक्त, स्तब्ध, अहंकारी, कर्म में अयोग्य होने के कारण मैंने उन्हें नहीं बुलाया है ।४४। इसलिए आप सब मिलकर ही मेरे यज्ञ को सफल करें और रुद्र के विषय में फिर कुछ न कहें ।४५। ब्रह्माजी ने कहा—दक्ष की बात सुनकर दधीचि ने पुन: कहा, जिसे देवता, मुनि आदि सब ने सुना ।४६। दधीचि बोले—शिवजी के बिना यह यज्ञ, अयज्ञ ही है, इससे तुम नष्ट हो जाओगे ।४७। इतना कहकर दधीचि वहाँ से उठकर चले गए और अपने आश्रम में जा पहुँचे ।४८। इनके पश्चात् जो भी शिवभक्त वहाँ आये थे, सभी दक्ष को शाप देकर अपने-अपने स्थान को गए ।४९।

मुनो विनिर्गते तस्मिन् मखादन्येषु दुष्टधीः ।
शिवद्रोही मुनीन् दक्षः प्रहसन्निदमब्रबीत् ।५०।
गतः शिवप्रियो विप्रो दधीचो नाम नामतः ।
अन्ये तथाविधा ये च गतास्ते मम चाध्वरात् ।५१।
एतच्छुभतरं जातं ममतं मे हि सर्वदा ।
सत्यं ब्रवीमि देवेश सुराश्च मुनयस्तथा ।५२।
विनष्टचित्ता मंदाश्च मिथ्यावादरताः खलाः ।
वेदवाह्या दुराचारास्त्याज्यास्ते मखकर्मणि ।५३।
वेदवादरतायूयं सर्वे विष्णुपुरोगमाः ।
यज्ञं मे सफलं विप्राः सुराः कुर्वन्तु मा चिरम् ।५४।
इत्याकर्ण्य वचस्तस्य शिव मायाविमोहिताः ।
यन्मखे देवयजनं चक्रुः सर्वे सुरर्षयः ।५५।
इति तन्मखशापो हि वर्णितौ मे मुनीश्वर ।
यज्ञविध्वंसयोगोऽपि प्रोच्यते शृणु सदारम् ।५६।

जब कुछ अन्य मुनिगण भी बहाँ से चले गये तब वह शिवद्रोही दक्ष उपस्थित जनों से कहने लगा ।५०। दक्ष ने कहा—शंकर का प्रिय दधीचि यहाँ से चला गया और उस जैसे अन्य व्यक्ति भी यहाँ से उठकर चले गये ।५१। यह अत्यन्त शुभ हुआ, मैं भी यही चाहता था, मैं

यह सत्य ही कह रहा हूँ ।५२। जिनकी बुद्धि नष्ट हो गई हो, आत्मा अस्वच्छ हों, मिथ्यावाद में रत हों, वेद से विरुद्ध तथा दुराचार से प्रवृत्त हों, ऐसों को कभी भी यज्ञ में न बुलावे ।५३। विष्णु आदि आप सभी वेदवाद में निरत हैं। हे विप्रो ! हे देवताओ ! आप ही मेरे यज्ञ को सफल कीजिए ।५४। ब्रह्माजी ने कहा—दक्ष के ऐसे वचन सुनकर शिवमाया में मोहित हुए देवता और ऋषि उस यज्ञ में देव-यजन करने लगे ।५। इस प्रकार यज्ञ में शाप देने का वर्णन हुआ अब यज्ञ विध्वंस का वृत्तान्त आदर सहित श्रवण करो ।५६।

।। सती का पिता के यज्ञ में जाने के लिये आग्रह ।।

यदा ययुर्दक्षमखमुत्सवेन सुरर्षयः ।
तस्मिन्ने वांतर देवी पर्वते गन्धमादने ।१।
धारागृहे वितानेन सखीभिः परिवारिता ।
दाक्षायणी महाक्रीड़ाश्चकार विविधाः सती ।२।
क्रीडासक्ता तदा देवी ददर्शाय मुद्रा सती ।
दक्षयज्ञे प्रयांत च रोहिण्यापृच्छ्य सत्वरम् ।३।
दृष्ट्वा सीमंतया भूतां विजयां प्राह सा सती ।
स्वसखप्रवरां प्राणप्रियां सा हि हितावहाम् ।४।
हे सखीप्रवरे प्राणप्रिये त्वं विजये मम ।
क्व गमिष्यति चन्द्रोऽयं रोहिण्यापृच्छ्य सत्वरम् ।५।
तथोक्ता विजया सत्या गत्वा तत्सन्निधौ द्रुतम् ।
क्व गच्छसीति पप्रच्छ शशिनं यथोचितम् ।६।
विजयोक्तमयाकर्ण्य स्वयात्रां पूर्वमादरात् ।
कथितं तेन सत्सर्वं दक्षयज्ञोत्सवादिकम् ।७।

ब्रह्माजी ने कहा—जब दक्ष-यज्ञ के लिए देवता और ऋषि जा रहे थे, उस अवसर पर सती गन्धमादन पर्वत पर ।१। वितान के नीचे अपनी सखियों के साथ विभिन्न प्रकार की क्रीड़ा में रत थीं ।२। उस क्रीड़ा के समय सती ने दक्ष-यज्ञ में जाती हुई रोहिणी के विषय में पूछा ।३। उसको शृंगार करते हुये देखकर सती ने विजया से कहा, क्योंकि

विजय सती की अत्यन्त प्रिय सखी तथा हितसाधिका थी ।४। सती ने कहा—हे विजया ! तू मेरी अत्यन्त प्रिय सखी है । यह चन्द्रमा कहाँ जा रहा है, यह बात तू रोहिणी से जाकर पूछ ।५। ब्रह्माजी ने कहा—सती की बात सुनकर विजया ने चन्द्रमा के पास जाकर पूछा कि तुम कहाँ जा रहे हो ? ।६। विजया की बात सुनकर चन्द्रमा ने दक्ष के यहाँ यज्ञ महोत्सव का सम्पूर्ण वृत्तान्त कहकर अपने वहाँ जाने की बात बताई ।७।

तच्छ्रुत्वा विजया देवीं त्वरिता जातसंभ्रमा ।
कथयामास तत्सर्वं यदुक्त शशिना सतीम् ।८।
तच्छ्रुत्वा कालिका देवी विस्मिताभूत्सती तदा ।
विमृश्य कारणं तत्राज्ञात्वा चेतस्यचिंतयत् ।९।
दक्षः पिता मे माता च वीरिणी नो कुतः सती ।
आह्वानं न करोति स्म विस्मृता मां प्रियां सुताम् ।१०।
पृच्छेयं शंकरं तत्र कारणं सर्वमादरात् ।
चितयित्वेति सासीद्वै तत्र गन्तुं सुनिश्चया ।११।
अथ दाक्षायणी देवी विजयां प्रवरां सखीम् ।
स्थापयित्वा द्रुतं तत्र समगच्छच्छिवांतिकम् ।१२।
ददर्श तं सभामध्ये संस्थितं बहुभिर्गणैः ।
नद्यादिभिर्महावीरैः प्रवरैर्यूथयूथपैः ।१३।
दृष्ट्वा तत्प्रभुमीशानं स्वपति साथ दक्षजा ।
प्रष्टुं तत्कारणं शीघ्रं प्राप शंकरसंनिधम् ।१४-१५।

यह सुनकर विजया अत्यन्त विस्मित हुई और उसने सती के पास आकर वह सब वृत्तान्त कह सुनाया, जो उससे चन्द्रमा ने कहा था ।८। यह सुनकर सती को भी बड़ा आश्चर्य हुआ और उसका कारण समझ में न आने से वह सोचने लगी ।९। दक्ष मेरे पिता हैं, मेरी माता वीरिणी हैं, इन्होंने मुझे यज्ञोत्सव में क्यों नहीं बुलाया ? मुझे वे क्यों भूल गये ? ।१०। मैं शिवजी के पास चलकर इसका कारण पूछूँ, यह सोचकर शिवजी के पास जाने का निश्चय किया ।११। सती विजया

को वहीं छोड़कर शिवजी के पास शीघ्रता से पहुंची ॥१२॥ वहाँ सभा जुड़ी हुई देखी—नन्दी आदि महागणों के मध्य में शिवजी विराजमान थे ॥१३॥ दक्षसुता ने अपने पति को इस प्रकार यूथपों के बीच में देखा और वह शीघ्रता से उनके समीप जा पहुँची ॥१४-१५॥

अथ शंभुर्महालीलः सर्वेशः सुखदः सताम् ।
सतीमुवाच त्वरितं गणमध्यस्थ आदरात् ॥१६
किमथमागताऽत्र त्वं सभामध्ये सविस्मया ।
कारणं तस्य सुप्रीत्या शीघ्रं वद सुमध्यमे ॥१७
एवमुक्ता तदा तेन महेशेन मुनीश्वर ।
सांजलिः सुप्रणम्याशु भत्युवाच प्रभुं शिवा ॥१८
पितुर्मम महान्यज्ञो भवतीति मया श्रुतम् ।
तत्रोत्सवो महानस्ति समवेताः सुरर्षयः ॥१९
पितुर्मम महायज्ञे कस्मात्तव न रोचते ।
गमनं देवदेवेश तत्सर्वं कथय प्रभो ॥२०
सुहृदामेष वै धर्मः सुहृद्भिः सह सङ्गतिः ।
कुर्वन्ति यन्महादेव सुहृदः प्रीतिवर्द्धिनीम् ॥२१

उस समय महाकौतुकी एवं सत्पुरुषों के लिए कल्याणप्रद शिवजी गणों के मध्य बैठे हुए ही सती से बोले ॥१६॥ शिवजी ने कहा—तुम आश्चर्यचकित-सी इतनी द्रुत-गति से सभा के मध्य क्यों आई हो, यह मुझे शीघ्र बताओ ॥१७॥ ब्रह्माजी ने कहा कि शंकर के इस प्रकार कहने पर सती ने हाथ जोड़कर अपने स्वामी से कहा ॥१८॥ सती बोली—हे प्रभो ! मेरे पिता के यहाँ महान् यज्ञ हो रहा है, ऐसा मैंने सुना है । उस महोत्सव में सब ऋषि मुनि एकत्र हुए हैं ॥१९॥ आपको मेरे पिता का यज्ञ अच्छा क्यों नहीं लगा ? आप वहाँ क्यों नहीं गये ? यह मुझे बताइये ॥२०॥ सुहृदों का सुहृयों से मिलन परम धर्म है । आप भी प्रीति की वृद्धि करने वाली इस नीति का पालन करें ॥२१॥

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन मया गच्छ सह प्रभो ।
यज्ञवाटं पितुर्मेद्य स्वामिन् प्रार्थनया मम ॥२२

तस्यास्तद्ववचनं श्रुत्वा सत्या देवोश्वरः ।
दक्षवागिषुहृद्विद्धो बभाषे सूनृतं वचः ।।२३
दक्षस्तव पिता देवि मम द्रोही विशेषतः ।।२४
यस्य मे मानिनः सर्वे ससुरर्षिमुखाः परे ।
ते मूढा यजनं प्राप्ताः पितुस्ते ज्ञानवर्जिताः ।।२५
अनाहूताच्च ये देवि गच्छंति परमंदिरम् ।
अवमानं प्राप्नुवति मरणादधिकं तथा ।।२६
परालयं गतोऽपीन्द्रो लघुर्भवति तद्विधः ।
का कथा च परेषां वै रीढा यात्रा हि तद्विधा ।।२७
तस्मात्त्वया मया चापि दक्षस्य यजनं प्रति ।
न गंतव्यं विशेषेण सत्यमुक्तं मया प्रिये ।।२८

हे प्रभो ! आप मेरे साथ वहाँ चलिए, हे स्वामिन् ! मेरा निवेदन है कि आप मेरे पिताजी के यज्ञ महोत्सव में अवश्य चलें ।२२। ब्रह्माजी ने कहा – सती के यह वचन सुनकर दक्ष के वचनों को स्मरण करते हुए शंकर ने सत्य वचन कहे ।२३। शिव ने कहा—हे देवि ! तुम्हारे पिता दक्ष मुझसे द्वेष रखते हैं ।२४। जो देवता-ऋषि उनके लिए मान्य हैं, वही मूर्ख बुद्धि वाले तुम्हारे पिता के यज्ञ में पहुँचे हैं ।२५। हे प्रिये ! जो किसी के यहाँ बिना बुलाये जा पहुँचते है वे तिरस्कृत होते हैं और उन्हें मरणादि तक प्राप्त हो सकता है ।२६। दूसरे के घर जाने पर इन्द्र की गरिमा भी नहीं रहती । बिना बुलाये जाना अनर्थक है ।२७। अतः दक्ष यज्ञ में मेरा जाना ठीक नहीं, तुम मेरी यह बात सत्य समझो ।२८।

तथारिभिर्न व्यथते ह्यर्दितोऽपि शरैर्जनः ।
स्वानां दुरुक्तिभिर्मर्म ताडितः स यथा मतः ।।२९
विद्यादिभिर्गुणैः षड्भिरसन्दयैः सतां स्मृतौ ।
हतायां भूयसां धाम न पश्यंति खलाः प्रिये ।।३०
एवमुक्ता सती तेन महेशेन महात्मना ।
उवाच रोषसंयुक्ता शिवं वाक्यविदां वरम् ।।३१
यज्ञः स्यात्सफला येन स त्वं शंभोऽखिलेश्वर ।

अनाहूतोऽसि तेनाद्य पित्रा मे दुष्टकारिणा ॥३२
तत्सर्वं ज्ञातुमिच्छामि भत्र भावं दुरात्मनः ।
सुरर्षीणां च सर्वेषामागतानां दुरात्मनाम् ॥३३
तस्माच्चाद्यैव गच्छामि स्वपितुर्यजनं प्रभो ।
अनुज्ञां देहि मे नाथ तत्र गंतुं महेश्वर ॥३४
इत्युक्तो भगवान् रुद्रस्तया देव्या शिवः स्वयम् ।
विज्ञाताखिलदृक् द्रष्टा सती सूतिकरोऽब्रवीत् ॥३५

स्वजनों के दुर्वाक्यों से अंतःकरण जितना व्यथित होता है, उतना तो शत्रुओं के बाणों से भी नहीं होता ।२९। हे प्रिये ! विद्यादि छः गुणों से सम्पन्न भी खलों द्वारा तेजहीन हो जाते हैं ।३०। ब्रह्माजी ने कहा—जब शिवजी ने सती से इस प्रकार कहा तब सती ने शङ्कर से क्रोधपूर्वक कहा ।३१। सती बोली—हे शंकर ! आप सबके ईश्वर हैं। आपके वहाँ जाने से यज्ञ सफल हो जाता, परन्तु मेरे दुष्टकर्मा पिता ने आपको निमन्त्रित नहीं किया ।३२। इसलिए मैं उस दुरात्मा के भाव को जानना चाहती हूँ। वहाँ दुरात्मा होकर सभी देवता और ऋषि पहुँचे हैं ।३३। इसलिये मैं भी उस यज्ञ में अवश्य जाऊँगी । हे प्रभो ! आप मुझे वहाँ जाने की अनुमति दें ।३४। ब्रह्माजी ने कहा – जब इस प्रकार सती ने कहा तो सर्वज्ञाता भगवान् शंकर ने उससे कहा ।३५।

यद्येव ते रुचिर्देवि तत्र गंतुमवश्यकम् ।
सुव्रते वचनान्मे त्वं गच्छ शीघ्रं पितुर्मखम् ॥३६
एतं नंदिनमारुह्य वृषभं सज्जमादरात् ।
महाराजोपचाराणि कृत्वा बहुगुणान्विता ॥३७
भूषितं वृषमारोहेत्युक्ता रुद्रेण सा सती ।
सुभूषिता सती युक्ता ह्यगमत्पितृमंदिरम् ॥३८
महाराजोपचाराणि दत्तानि परमात्मना ।
सुच्छत्रचामरादीनि सद्वस्त्राभरणानि च ॥३९
गणाः षष्टिसहस्राणि रौद्रा जग्मुश्शिवाज्ञया ।
कुतूहलयुताः प्रीता महोत्सवसमन्विताः ॥४०

तदोत्सवो महानासीद्यजने तत्र सर्वतः ।
सत्याश्शिवप्रियायस्तु वामदेवगणैः कृतः ।।४१
कुतूहलं गणाश्चक्रुशिवयोर्यश उज्जगुः ।
बालांतः पुप्लुवुः प्रीत्या महावीराश्शिवप्रियाः ।।४२
सर्वथासीऽन्महाशोभा गमने जागदम्बिके ।
सुखारावः संबभूव पूरितं भुवनत्रयम् ।।४३

हे देवि ! यदि तुम वहाँ जाना ही चाहती हो तो मेरी आज्ञा से अवश्य ही जाओ ।।३६।। इस नन्दी वृषभ को सुसज्जित कर और इस पर चढ़ कर ।।३७।। अपने सभी आभूषण धारण कर शीघ्र जाओ । यह सुनकर सती सभी साज-सज्जा मुक्त होकर अपने पितृगेह को चली ।।३८।। भगवान् शंकर ने महाराजों जैसी साज-सज्जा प्रदान की–छत्र, चँवर, आभरण आदि दिये ।।३९।। शिवजी को आज्ञा से साठ हजार शिवगण सती के साथ महोत्सव करते हुये चले ।।४०।। उस समय उस देव-यजन भूमि से महोत्सव आरम्भ हुआ और सती के साथ अनेक वाम-देव गणों ने प्रस्थान किया ।।४१।। शिवजी तथा शिवा का गुणगान करते करते हुए शिवगण कुतूहलपूर्वक दूर-दूर तक कूदते-फाँदते चले ।।४२।। सती के चलने में सब प्रकार शोभा हुई और उनके मुख से निकले हुए शब्दों से तीनों भुवन परिपूर्ण हो गये ।।४३।।

।। दक्ष द्वारा सती का तिरस्कार ।।

दाक्षायणी गता तत्र यत्र यज्ञो महाप्रभः ।
सुरासुरमुनीन्द्रादिकुतूहलसमन्वितः ।।१
स्वपितुर्भवनं तत्र नानाश्चर्यसमन्वितम् ।
ददर्श सुप्रभं चारु सुरर्षिगणसंयुतम् ।।२
द्वारिस्थिता तदा देवी ह्यवरुह्य निजासनात् ।
नन्दिनोऽभ्यंतरं शीघ्रमेकैवागच्छदध्वरम् ।।१३
आगतां च सतीं दृष्ट्वाऽसिक्नी माता यशस्विनी ।
अकरोदादरं तस्या भगिन्यश्च यथोचितम् ।।४
नाकरोदादरं दक्षो दृष्ट्वा तामपि किंचन ।

नान्योऽपि तद्भयातत्र शिवमायाविमोहितः ॥५
अथ सा मातरं देवी पितरं च सती मुने ।
अनमद्विस्मितात्यंतं सर्वलोकपराऽभवत् ॥६
भागानपश्यद्देवानां हर्यादीनां तदन्तरे ।
न शंभुभागमकरोत् क्रोधं दुर्विषहं सती ॥७

इस प्रकार सती वहाँ पहुँच गई, जहाँ अत्यन्त प्रभावशाली यज्ञ हो रहा था । देवता, दैत्य, मुनि और इन्द्रादि वहाँ कुतूहल कर रहे थे ॥१॥ उस समय सती ने अपने पिता के स्थान को अनेक आश्चर्यों तथा देवता और मुनियों से युक्त देखा ॥२॥ सती अपने आसन से द्वार में उतर पड़ी और केवल नन्दी को साथ लेकर यज्ञ भूमि में पहुँची ॥३॥ सती को आयी हुई देखकर उसकी माता और बहिनों ने उसका स्वागत किया ॥४॥ परन्तु दक्ष ने उसे देखकर भी आदर नहीं किया तथा शिवमाया में मोहित अन्य व्यक्तियों ने भी आदर नहीं किया ॥५॥ तब सती ने अत्यन्त आश्चर्य से अपने माता-पिता को प्रणाम किया और अत्यन्त दुःखी हुई ॥६॥ सती ने उस यज्ञ में विष्णु आदि सब देवताओं का भाग पृथक्-पृथक् देखा, परन्तु शिव का भाग न देखकर अत्यन्त क्रोधित हुई ॥७॥

तदा दक्षं दहन्तीव रुषा पूर्णा सती भृशम् ।
क्रूरदृष्ट्या विलोक्यैव सर्वानप्यपमानिता ॥८
अनाहूतस्त्वया कस्माच्छंभुः परमशोभनः ।
येन पूतमिदं विश्वं समग्रं सचराचरम् ॥९
यज्ञो यज्ञविदां श्रेष्ठो यज्ञांगो यज्ञदक्षिणाः ।
यज्ञकर्ता च यः शंभुस्तं विना च कथं मखः ॥१०
यस्य स्मरणमात्रेण सर्वं पूतं भवत्यहो ।
विना तेन कृतं सर्वमपवित्रं भविष्यति ॥११
द्रव्यमंत्रादिकं सर्वं हव्यं च यन्मयम् ।
शंभुना हि विना तेन कथं यज्ञः प्रवर्तितः ॥१२
किं शिवं सुरसामान्यं मत्वाकार्षीरनादरम् ।
भ्रष्टबुद्धिर्भवानद्य जातोऽसि जनकाधम ॥१३

विष्णु ब्रह्मादयो देवा यं संसेव्य महेश्वरम् ।
प्राप्ताः स्वपदवीं सर्वे तं न जानासि रे हरम् ।।१४

अयन्त क्रोध में जैसे दक्ष को भस्म करना चाहती हो, अत्यन्त अपमान अनुभव करते हुए उसने कहा ।८। कि जिनकी कृपा से यह सम्पूर्ण चराचर जगत पवित्र हो जाता है, उन शिव को तुमने क्यों नहीं बुलाया ? ।९। यज्ञ स्वरूप, यज्ञ-ज्ञाताओं में श्रेष्ठ, यज्ञ के अङ्ग, यज्ञ के दक्षिणास्वरूप तथा यज्ञ-कर्ता शंकर के बिना यज्ञ का सम्पादन कैसा ? ।१०। जिनके स्मरण मात्र से ही सब कुछ पवित्र हो जाता है, उसके न होने पर सब अपवित्र ही रहेगा ।११। सम्पूर्ण द्रब्य, मन्त्र तथा हव्य—कव्य उनके बिना निरर्थक है तब इस यज्ञ की प्रवृत्ति ही उनके बिना किस प्रकार हुई ? ।१२। क्या तुमने शिवजी को सामान्य देवता समझ कर उनका निरादर किया है ? हे पिता ! तुम अधम और बुद्धिभ्रष्ट हो ।१३। विष्णु, ब्रह्मा आदि भी जिन शंकर की सेवा करके अपनी पदवी को प्राप्त हुए हैं तुम उन महेश्वर को नहीं जानते ? ।१४।

एते कथं समायाता विष्णुब्रह्मादयः सुराः ।
तव यज्ञे बिना शंभुं स्वप्रभुं मुनयस्तथा ।।१५
इत्युक्त्वा परमेशानी विष्ण्वादीन्सकलान् प्रति ।
पृथक्पृथगवोचत्सा भर्त्सयंती भवात्मिका ।।१६
हे विष्णो त्वं महादेवं किं न जानासि तत्त्वतः ।
सगुणं निर्गुणं चापि श्रुतयो यं वदंति ह ।।१७
यद्यपि त्वां करं दत्त्वा बहुवारं महेश्वरः ।
अशिक्षयत्पुरा शाल्वप्रमुखाकृतिभिर्हरे ।।१८
तदपि ज्ञानमायातं न ते चेतसि दुर्मते ।
भागार्थी दक्षयज्ञेऽस्मिन् शिवं स्वस्वामिनं विना ।।१९
पुरा पंचमुखो भूत्वा गर्वितोऽसि सदाशिवम् ।
कृतश्चतुर्मुखस्तेन विस्मृतोऽसि तदद्भुतम् ।।२०
इन्द्र त्वं किं न जानासि महादेवस्य विक्रमम् ।
भस्मीकृतः पविस्तेनि हरेण क्रूरकर्मणः ।।२१

यह विष्णु तथा ब्रह्मादि देवता अपने स्वामी शंकर के बिना यहां कैसे आ गये ? ।१५। ब्रह्माजी बोले कि सब देवताओं के प्रति इस प्रकार कहती हुई सती ने क्रोधपूर्ण मुद्रा में देखते हुए कहा ।१६। सती ने कहा-- हे विष्णु ! क्या आप तत्व से शिवजी को नहीं जानते । श्रुतियाँ उनको गुण-रहित बताती हैं ।१७। हे विष्णो ! यद्यपि शिवजी ने अनेक बार शाल्व आदि के समय हाथ देकर तुम्हें शिक्षा दी है ।१८। हे मतिहीन ! फिर भी तुमको ज्ञान नहीं हुआ और अपने स्वामी का भाग न देखकर भी अपना भाग स्वीकार कर लिया ।१९। हे ब्रह्मा ! तुम पहिले अहंकार वश शिवजी के प्रति द्रोह किया करते थे । तुम्हारे पाँच मुख थे परन्तु शिवजी ने चार कर डाले । इसे क्या तुम भूल गये ? ।२०। हे इन्द्र ! क्या तुम्हें शिवजी का पराक्रम ज्ञात नहीं है । कठिनकर्मा रुद्र ने तुम्हारे वज्र तक को भस्म कर डाला था ।२१।

हे सुराः किन्न जानीथ महादेवस्य विक्रमम् ।
अत्रे वसिष्ट मुनयो युष्माभिः किं कृतं त्विह ।।२२
भिक्षाटनं च कृतवान् पुरा दारुबने विभुः ।
शप्तो यद्भिक्षुको रुद्रो भवद्भिर्मुनिभिस्तदा ।।२३
शप्तेनापि च रुद्रेण यत्कृतं विस्मृतं कथम् ।
तल्लिगेनाखिलं दग्धं भुवनं सचराचरम् ।।२४
सर्वे वेदाश्व संभूता सांगाः शास्त्राणि वाग्यतः ।
सोऽसौ वेदांतगः शंभुः कैश्चिज्ज्ञातुं न पार्यते ।।२५
सर्वे मूढाश्च संजाता विष्णुब्रह्मादयः सुराः ।
मुनयोऽन्ये विना शंभुमागता यदिहाध्वरे ।।२६
इत्यनेकविधां वाणीरगदज्जगदम्बिका ।
कोपान्विता सती तत्र हृदयेन विदूयता ।।२७

हे देवगण ! क्या तुम शंकर के कर्म से अनभिज्ञ हो ? हे अत्रि ! हे वसिष्ठ ! तुमने यह क्या किया ? ।२२। जब वे दारुवन में भीख माँगने गये थे, उस समय तुम ऋषियों ने उन भिखारी के वेश वाले शिवजी को शाप दे दिया था ।२३। उन शापित शिव ने जो किया,

उसे क्या तुम भूल गये ? उस शिव लिंग से चराचर जगत् भस्म होने लगा था ।।२४।। उस समय विष्णु आदि सभी देवता मूढ़ हो गये हैं जो शिवजी के बिना इस यज्ञ में उपस्थित हुए हैं ।।२५।। यहाँ अंगों सहित वेदशास्त्र भी मौन हैं, परन्तु वेदान्त से जानने के योग्य भगवान शिव को जानने में समर्थ कोई भी नहीं है ।।२६।। ब्रह्माजी ने कहा कि सती ने ऐसे वचन क्रोधपूर्वक कहे और वह दुःखी हृदय से क्रोध में खड़ी रही ।।२७।।

विष्ण्वादयोऽखिला देवा मुनयो ये च तद्वचः ।
मौनी भूतास्तदाकर्ण्य भवव्याकुलमानसाः ।।२८
अथ दक्षः समाकर्ण्य स्वपुत्र्यास्तादृशं वचः ।
विलोक्य क्रूरदृष्टया तां सतीं क्रुद्धोऽब्रवीद्वचः ।।२९
तव किं बहुनोक्तेन कार्यं नास्तीह सांप्रतम् ।
गच्छ वा तिष्ठ वा भद्रे कस्मात्त्वं हि समागता ।।३०
अमंगलस्तु ते भर्ता शिवोऽसौ गम्यते बुधैः ।
अकुलीनो वेदबाह्यो भूतप्रेतपिशाचराट् ।।३१
तस्मान्ना ह्वायितो रुद्रो यज्ञार्थं सुकुवेषभृत् ।
देवर्षिसंसदि मया ज्ञात्वा पुत्रि विपश्चिता ।।३२
विधिना प्रेरितं न त्वं दत्ता मंदेन पापिना ।
रुद्रायाविदितार्थाय चोद्धताय दुरात्मने ।।३३
तस्मात्कोपं परित्यज्य स्वस्था भव शुचिस्मिते ।
यद्यागतासि यज्ञेऽस्मिन् बाय गृह्णीष्व चात्मना ।।३४
दक्षेणोक्तेति सा पुत्री सती त्रैलोक्यपूजिता ।
निन्दायुक्तं स्वपितरं दृष्ट्वाऽऽसीद्रुषिता भृशम् ।।३५

सती के क्रोध पूर्ण वाक्यों को सुनकर विष्णु आदि सभी देवता भयभीत मन मौन बैठे रहे ।।२८।। अपनी पुत्री के वैसे वचन सुनकर दक्ष ने उसे क्रूर-दृष्टि से देखा और क्रोधपूर्वक कहने लगा ।।२९।। दक्ष ने कहा–हे भद्रे ! तू अधिक यह सब क्या कह रही है । तेरा यहाँ कोई प्रयोजन नहीं है, तू रह चाहे चली जा । तू यहाँ किसलिये आई है ?

।।३०।। सब मेधावीजन जानते हैं कि तुम्हारे पति शंकर अमंगलमय लक्षण वाले, अकुलीन, वेद से बहिर्मुख और भूत-पिशाचों के अधिपति हैं ।।३१।। इसीलिए उन कुवेश वाले शिव को यहाँ नहीं बुलाया। मैंने बुद्धिपूर्वक समझ लिया कि देवताओं और ऋषियों की सभा में उनका क्या प्रयोजन है ? ।।३२।। मुझ मन्द बुद्धि वाले ने ब्रह्माजी के कहने से तुझे उनको दे दिया, मैं यह नहीं जानता था कि रुद्र क्रोधी तथा दुरात्मा है ।।३३।। हे पुत्री ! इसलिए तू क्रोध को छोड़कर स्वस्थ हो और इस यज्ञ में आ गई तो अपना भाग ग्रहण कर ।।३४।। ब्रह्माजी ने कहा—दक्ष के इस प्रकार कहने पर सती अपने पिता को निन्दायुक्त दृष्टि से देखते हुए अत्यन्त रोष करने लगी ।।३५।।

अचिंतयत्तदा से त कथं यास्यामि शंकरम् ।
शंकरं द्रष्टुकामाऽहं पृष्टा वक्ष्ये किमुत्तरम् ।।३६
अथ प्रोवाच पितरं दक्षं तं दुष्टमानसम् ।
निःश्वसंती रुषाविष्टा सा सती त्रिजगत्प्रसूः ।।३७
यो निंदति महादेवं निंद्यमानं शृणोति वा ।
तावुभौ नरकं यातौ यावच्चन्द्रदिवाकरौ ।।३८
तस्मात्त्यक्ष्याम्यहं देहं प्रवेक्ष्यामि हुताशनम् ।
किं जीवितेन मे तात शृण्वंत्यानादरं प्रभोः ।।३९
यदि शक्तः स्वयं शंभोर्निन्दकस्य विशेषतः ।
छिंद्यात् प्रसह्य रसनां तदा शुद्ध्येन्न संशयः ।।४०
यद्यशक्तो जनस्तत्र निरयात्सुपिधाय वै ।
कर्णौ धीमान् ततश्शुद्ध्येद्वदंतीदं बुधा वराः ।।४१
इत्युक्त्वा धर्मनीतिं पश्चात्तापमवाप सा ।
अस्मरच्छांकरं वाक्यं दूयमानेन चेतसा ।।४२

सती विचार करने लगी कि मैं शिवजी के पास किस प्रकार पहुँचू ? इस समय मुझे शिवजी के दर्शन की कामना है, परन्तु जब वे मुझसे यहाँ का हाल पूछेंगे तो उन्हें क्या उत्तर दूँगी ? ।।३६।। तीनों लोकों को उत्पन्न करने वाली सती क्रोध से बारम्बार स्वांस खींचती

हुई अपने दुष्ट-हृदय पिता दक्ष से कहने लगी ।३७। सती ने कहा—जो शिवजी की निन्दा करते या उनकी निन्दा सुनते हैं, वह निश्चय ही नरक में पड़ते हैं ।३८। इसलिये मैं अग्नि में प्रविष्ट होकर देह छोड़ती हूं । क्योंकि अपने स्वामी की निन्दा सुनकर मैं जीवित नहीं रह सकती ।३९। यदि सामर्थ्य हो तो निन्दा करने वाले की जिह्वा को काट डाले, तभी दोष छूटता है, इनमें सन्देह नहीं है ।४०। यदि सामर्थ्य न हो तो अपने कानों पर हाथ रखकर वहाँ से दूर चला जाय, ज्ञानियों का यही कहना है ।४१। ब्रह्माजी ने कहा कि इस प्रकार नीति वचन कहकर सती अत्यन्त दु खी मन से शिवजी को याद करने लगी ।४२।

ततः संक्रुद्धय सा दक्षं निःशकं प्राह तानपि ।
सर्वान्विष्णवादिकान्देवान्मुनीनपि सती ध्रुवम् ।।४३
तात त्व निंदकः शंभोः पश्चात्तापं गमिष्यसि ।
इह भुक्त्वा महादुःखमंते यास्यसि यातनाम् ।।४४
यस्य लोकेऽप्रियो नास्ति प्रियश्चैव परात्मनः ।
तस्मिन्नवैरे शर्वेऽस्मिन् त्वां दिनाः कः प्रतीपकः ।।४५
महाद्विनिंदा नाश्चर्यं सर्वदाऽसत्सु सेर्ष्यकम् ।
महदंघ्रिरजोध्वस्ततमः सु सैव शोभना ।।४६
शिवेति द्व्यक्षरं यस्य नृणां नाम गिरेरितम् ।
सकृत्प्रसंगात्सकलमघमाशु निहंति तत् ।।४७
पवित्र कीर्तितमलं भवान् द्वेष्टि शिवेतरः ।
अलंघ्यशासनं शंभुमहो सश्वर्वेश्वरं खलः ।।४८
यत्पादपद्मं महतां मनोऽलिसुनिषेवितम् ।
सर्वार्थदं ब्रह्म रसैः सर्वार्थिभिरथादरात् ।।४९

फिर निःशंक भाव से विष्णु आदि देवताओं और मुनियों से क्रोधपूर्वक कहने लगी ।४३। सती ने कहा—तुम सब शिवनिन्दक अत्यन्त पश्चाताप को प्राप्त होगे । यहाँ महा दुःख प्राप्त करते हुए अन्त में यमलोक के कष्ट सहोगे ।४४। जिसका विश्व में कोई अप्रिय नहीं,

सब ही उनके प्रिय हैं, उन निवर शिवजी से तुम्हारे सिवाय अन्य कौन वैर करेगा ? ।४५। इसमें विस्मय भी क्या है ? असत् व्यक्ति महान् पुरुषों की निन्दा करते हैं परन्तु महापुरुषों की चरण-रज से अज्ञान नष्ट कर लेने में ही शोभा है ।४६। जिसने अपनी वाणी से 'शिव' इन दो अक्षरों का उच्चारण किया, उसके पाप एक बार के उच्चारण से ही नष्ट हो गये ।४७। भगवान् शिव का शासन लंघन के योग्य नहीं है, परन्तु तुम अमंगल स्वरूप उन पवित्र प्रभु से द्वेष करते हो ।४८। जिनके पद-पद्मों में बड़े-बड़े सन्त पुरुषों का मन रमा रहता है, जो ब्रह्मरस के द्वारा सभी कामना करने वालों को उनके अनुसार फल देते हैं ।४९।

यद्वर्षत्यर्थिनः शीघ्रं लोकस्य शिव आदरात् ।
भवान् द्रुह्यति मूर्खत्वात्तस्मै चाशेषबंधवे ।।५०
किं वा शिवाख्यमशिवं त्वदम्ये न विदुर्बुधाः ।
ब्रह्मादस्तं मुनयः सनकाद्यास्तथा परे ।।५१
अवकीर्य जटा भूतैः श्मशाने स कपालधृक् ।
तन्माल्सभस्म वा ज्ञात्वा प्रीत्यावसदुरारधीः ।।५२
ये मूर्द्धाभिर्दधति तच्चरणोत्सृष्टमादरात् ।
निर्माल्यं मुनयो देवाः स शिवः परमेश्वरः ।।५३
प्रवृत्तं च निवृत्तं च द्विविधं कर्म चोदितम् ।
वेदे विविच्य वृत्तं च तद्विचार्य मनीषिभः ।।५४
विरोधियौगपद्यैककर्तृके च तथा द्वयम् ।
परब्रह्मणि शंभौ तु कर्मच्र्छन्ति न किंचन ।।५५
मा वः पदव्यः स्म पितः या अस्मदाथिताःसदा ।
यज्ञशालासु वो धूम्रवर्त्मभुक्तोज्झिताः परम् ।।५६

जो शिवजी अभ्यर्थियों पर शीघ्र ही कामना की वृष्टि करते हैं, उन लोकबन्धु शिवजी से तुम शत्रुता करते हो ।५०। उन शिव को तुम्हादे सिवा कोई अन्य 'अशिव' नहीं जानता, ब्रह्मादि, सनकादि तथा अन्य मुनि क्या उन्हें नहीं जानते ? ।५१। वे भूतगणों के साथ श्मशान

में जटा खोलकर कपाल धारण करते हैं। वे उदार बुद्धि वाले प्रेम से मृतक की अस्थियों की माला कौर भस्म को धारण करते हैं ॥५२॥ उनकी चरणरज को आदर सहित शिर पर धारण करने वाले मनुष्य पाप रहित हो जाते हैं। जिनके निर्माल्य की कामना मुनि और देवता करते हैं, वह परमेश्वर शिव ही हैं ॥५३॥ वेद के अनुसार प्रवृत्ति और निवृत्ति के भेद से दो प्रकार के कर्म हैं, बुद्धिमानों को उन पर विचार करना चाहिए ॥५४॥ एकही कर्त्ता में वे दोनों विरोधी हो जाते हैं परन्तु शिवजी के लिए किसी कर्मादा की इच्छा नहीं है ॥५५॥ हे पिता! तुम्हारी यज्ञशाला का धूम्र अपने मार्ग को छोड़ दे और तुम्हारे पद का व्यय न हो ॥५६॥

नो व्यक्तलिंगः सततमवधूतसुसेवितः।
अभिमानमतो न त्वं कुरु तात कुबुद्धिधृक् ॥५७
किं बहूक्तेन वचसा दुष्टस्वत्वं सर्वथा कुधीः।
त्वदुद्भवेम देहेन न मे किंचित्प्रयोजनम् ॥५८
तज्जन्म धिग्यो महतां सर्वथावद्यकृत्खलः।
परित्याज्यो विशेषेण तत्संबंधो विपश्चिता ॥५९
गोत्रं त्वदीयं भगवान् यदाह वृषभध्वजः।
दाक्षायणीति सहसाऽहं भवामि सुदुर्मनाः ॥६०
तस्मात्त्वदंगजं देहं कुणपं गर्हित सदा।
व्युसृज्य नूनमधुनाभविष्यामि सुखावहा ॥६१
हे सुरा मुनय सर्वे यूयं शृणुत मद्वचः।
सर्वथाऽनुचितं कर्म युष्माकं दुष्टचेतसाम् ॥६२
सर्वे यूयं विमूढा हि शिवनिंदाः कलिप्रियाः।
प्राप्स्यंति दंडं नियतमखिलं च हराद्ध्रुवम् ॥६३
दक्षमुक्त्वाऽवरे तांश्च व्यरमत्सा सती तदा।
अनुद्य चेतसां शंभुमस्मरत् प्राणवल्लभम् ॥६४

वह अव्यक्त लिंग अवधूतों के द्वारा सदा सेवित हैं, तुम कुबुद्धि से उनके प्रति अभिमान न करो ॥५७॥ कुबुद्धिवश तुम महादुष्ट हो गये

हो । तुम्हारे द्वारा उत्पन्न इस देह को रखना ठीक नहीं है ॥५८॥ जिस जन्म में महान् पुरुषों की निन्दा हो, उस जन्म को धिक्कार है । बुद्धिमान व्यक्ति को तुमसे सम्बन्ध नहीं रखना चाहिये ॥५६॥ तुम्हारे द्वारा उत्पन्न होने के कारण शिवजी मुझे दाक्षायणी कहते हैं, मुझे इस उच्चारण से अब दुःख होगा ॥६०॥ इसलिए तुम्हारे देह से उत्पन्न हुए गर्हित शरीर को अभी छोड़कर सुखी होऊँगी ॥६१॥ हे देवगण । हे मुनिगण ! तुम सब मेरे वचनों को सुनो । तुम सब दुष्ट चित्त वाले हो और तुम्हारा यह कर्म सर्वथा निन्दा के योग्य है ॥६२॥ तुम सभी मूर्ख हो गये हो तुमने शिव की निन्दा की है, इसलिए भगवान् शंकर द्वारा तुम्हें इसका दण्ड शीघ्र ही प्राप्त होगा ॥६३॥ यह कहकर सती दुख से व्याकुल हुई अपने प्राणवल्लभ शिवजी का चिन्तन करने लगी ॥६४॥

॥ यज्ञ स्थल में सती का देहत्याग ॥

मौनीभूता यदा साऽऽसीत्सती शंकरवल्लभा ।
चरित्रं किमभूतत्तत्र विधे तद्वद चादरात् ॥१
मौनीभूता सती देवी स्मृत्वा स्वपतिमादरात् ।
क्षितावुदीच्यां सहसा निषसाद प्रशांतधीः ॥२
जलमाचम्य विधिवत् संबृता वाससा शुचि ।
दृङ् निमील्य पतिं स्मृत्वा योगमार्ग समाविशत् ॥३
कृत्वा समानावनिलौ प्राणापानौ सितानन ।
उत्थाप्योदानमथ च यत्नात्सा नाभिचक्रतः ॥४
हृदि स्थाप्योरसि धिया स्थितं कंठाद्भ्रुवोः सती ।
अनिंदिताऽनयन्मध्यं शंकरप्राणवल्लभा ॥५
एवं स्वदेहं सहसा दक्षकोपाज्जिहासती ।
दग्धे गात्रे वायुशुचिधारणं योगमार्गतः ॥६
तत स्व भर्तुश्चरणं चिंतयंतीं न चापरम् ।
अपश्यत्सा सती तत्र योग मार्गनिविष्टधीः ॥७

नारदजी ने कहा—हे ब्रह्माजी ! जब सती चुप हो गई, तब क्या

हुआ वह आप सादर मेरे प्रति कहें ।१। ब्रह्माजी ने कहा—अपने पति का स्मरण करती हुई सती मौन एवं शान्त होकर भूमि में उत्तर की ओर बैठ गई ।२। उसने विधिपूर्वक आचमन किया और नियम में तत्पर होकर शुद्ध वस्त्र पहिन कर नेत्र मूंद लिये तथा शिवजी के स्मरण पूर्व योच-मार्ग में लीन हो गइ ।३। उसने प्राण-अपान वायु को समान कर और यत्नपूर्वक उदान को नाभिचक्र से उठाकर ।४। उन्हें हृदय में स्थापित किया और फिर कंठ में लाकर भौं के बीच में प्राण वायु को स्थापित किया ।५। दक्ष के कारण क्रोधपूर्वक सहसा अपने शरीर को छोड़ने की इच्छा से सती ने इस प्रकार योग धारण किया और वायु से ही शरीर को भस्म करना प्रारम्भ किया ।६। उस समय उसने केवल अपने पति के चरण कमलों का स्मरण किया वह शिवजी का ध्यान करते हुए योग-मार्ग में प्रवृत्ति हुई ।७।

हतकल्मषतद्देहः प्रापतच्च तदग्निना ।
भस्मसादभवत्सद्यो मुनिश्रेष्ठ तदिच्छया ॥८
तत्पश्यतां च खे भूमौ वादोऽभूत्सुमहांस्तदा ।
हाहेति सोऽद्भुतश्चित्रः सुरादीनां भयावहः ॥९
हंत प्रिया परा शंभोर्देवी दैवतमस्य हि ।
अहदसून् सती केन सुदुष्टेन प्रकोपिता ॥१०
अहो त्वनात्म्यं सुमहदस्य दक्षस्य पश्यत ।
चराचरं प्रजा यस्य यत्पुत्रस्य प्रजापतेः ॥११
अहोऽद्य विमनाऽभूत्सा सती देवी मनस्विनी ।
वृषध्वजप्रियाऽभीक्ष्णं मानयोग्या सतां सदा ॥१२
सोयं दुर्मर्षहृदयो ब्रह्मध्रुक्स प्रजापतिः ।
महतीमपकीर्तिं हि प्राप्स्यति त्वखिले भवे ॥१३
यत्स्वांगजां सुतां शंभुद्विट् न्यषेधत्समुद्यताम् ।
महानरक भोगी स मृतये नोऽपराधतः ॥१४

उसका शरीर विकार रहित हो गया और सब ओर से उसमें अग्नि प्रज्ज्वलित हो उठी और उसकी इच्छा से तत्काल ही सम्पूर्ण शरीर

भस्म हो गया ।८। यह होते ही पृथिवी और आकाश में बड़ा कोलाहल मचा, देवताओं के हाहाकार गूँज उठे, सभी उस अद्भुत दृश्य से विस्मित थे । ।९। खेद है कि परम देव शिवजी की प्रिया सती ने अपने प्राण त्याग दिये, इसे किस दुष्ट ने रुष्ट किया था ? ।१०। इस दक्ष की घोर मूर्खता देखो, चराचर प्रजा, जिस प्रजापति की पुत्र रूप है, उसके अज्ञान को तो देखो ।११। देखो, आज सती का यह क्या हुआ ? निश्चय ही वह शिव-प्रिया अपमान के योग्य नहीं थी ।१२। परन्तु, यह प्रजापति घोर अहंकारी और ब्रह्म-द्रोही होगया, इसने संसार में इस कर्म से घोर अपयश को प्राप्त किया है ।१३। जिसने अपने देह से उत्पन्न हुई पुत्री का शिवद्रोह के वश तिरस्कार किया, यह इसका घोर अपराध हुआ है, इसे अन्त में महानरक भोगना पड़ेगा ।१४।

वदत्येवं जने सत्या दृष्ट्वाऽसुत्यागमद्भुतम् ।
द्रुन तत्पार्षदाः क्रोधादुदतिष्ठन्नुदायुधाः ।।१५
द्वारि स्थिता गणाः सव रसायुतमिता रुषा ।
शंकरस्य प्रभोस्ते वाऽक्रुध्यन्नतिमहाबलाः ।।१६
हाहाकारमकुर्वस्ते धिग्धिग न नेति वादिनः ।
उच्चैस्सर्वेऽसक्रुवीराः शंकरस्य गणाधिपाः ।।१७
हाहाकारेण महता व्याप्तमासीद्दिगन्तरम् ।
सर्वे प्रापन् भयं देवा मुनयोऽन्येऽपि ते स्थिताः ।।१८
गणा समंत्र्य ते सर्वेऽभूवन् क्रुद्धा उदायुधाः ।
कुर्वन्तः प्रलयं वाद्यशस्त्रै व्याप्तं दिगंतरम् ।।१९
शस्त्रैरघ्नन्निजांगानि केचित्तत्र शुचाकुलाः ।
शिरोमुखानि देवर्षे सुतीक्ष्णैः प्राणनाशिभिः ।।२०
इत्थं ते विलयं प्राप्ता दाक्षायण्या समं तदा ।
गणायुते द्वेच तदा तदद्भुतमिवाभवत् ।।२१

सती के देह त्याग के पश्चात् सभी इस प्रकार कह रहे थे । इस काण्ड को देखकर शिवगण भी हाथों में आयुध ग्रहण कर उठ खड़े हुए

॥१५॥ यज्ञद्वार में साठ हजार शिवगण उपस्थित थे, वे महाबली थे, उन्हें बड़ा क्रोध उत्पन्न हुआ ॥१६॥ वे सब हाहाकार करते हुए अपने को धिक्कारने लगे तथा क्रोधपूर्वक वे उच्च स्वर से चिल्लाये ॥१७॥ उनके हाहाकार से पृथिवी और आकाश भर उठे। वहाँ उपस्थित सभी देवता और मुनि अत्यन्त भयभीत हुए ॥१८॥ गणों ने परस्पर सलाह कर अस्त्र ग्रहण किये, उनके वाद्य तथा अस्त्रों के भीषण शब्द से प्रलय का-सा दृश्य उपस्थित हो गया ॥१९॥ किसी-किसी ने तो अपने अंग काट डाले और किसी-किसी ने उन तीक्ष्ण शस्त्रों से अपने शिर और मुख नष्ट कर लिये ॥२०॥ इस प्रकार वे सती के साथ स्वयं भी नष्ट हो गए। इस प्रकार बीस हजार गण स्वयं नष्ट हो गए, यह अत्यन्त अद्भुत बात हुई ॥२१॥

गणा नाशवशिष्टा ये शंकरस्य महात्मनः।
दक्षं तं क्रोधितं हन्तुमुदतिष्ठन्नुदायुधाः ॥२२
तेषामापततां वेगं निशम्य भगवान् भृगुः।
यज्ञघ्नघ्नेन यजुषा दक्षिणाग्नौ जुहोन्मुने ॥२३
हूयमाने च भृगुणा समुत्पेतुर्महासुराः।
ऋभवो नाम प्रबला वीरास्तत्र सहस्रशः ॥२४
तैरलातायुधैस्तत्र प्रमथानां मुनीश्वर।
अभूद्युद्धं सुविकटं शृण्वतां रोमहर्षणम् ॥२५
ऋभुभिस्तैर्महावीरैर्हन्यमानाः समन्ततः।
अयत्नयानाः प्रमथा उशद्भिर्ब्रह्मतेजसा ॥२६
एवं शिवगणस्ते वै हता विद्राविता द्रुतम्।
शिवेच्छया महाशक्त्या तदद्भुतमिवाभवत् ॥२७
तद्दृष्ट्वा ऋषयो देवाः शक्राद्याः समरुद्गणाः।
विश्वेऽश्विनौ लोपालास्तूष्णींभूतास्तदाऽभवन् ॥२८

जो शिवगण शेष रहे उन्होंने दक्ष का वध करने के लिए क्रोधपूर्वक आयुध ग्रहण किये ॥२२॥ महर्षि भृगु ने उनका यह विचार देखकर यज्ञ के विघ्न को दूर करने वाले यजुर्मन्त्रों से दक्षिणाग्नि में आहुति देना

प्रारम्भ किया ।२३। भृगु की आहुतियों से ऋभवनामक सहस्रों महावीर उस कुण्ड से उत्पन्न हुए ।२४। हे मुनीश्वर ! उनके चक्रायुधों से शंकर के हजारों वीर युद्ध करने लगे और वहाँ अत्यन्त भयंकर युद्ध होने लगा ।२५। ऋभु और महावीरगण परस्पर भिड़ गये और ब्रह्म तेज के कारण प्रयत्न के बिना ही शिवगण मृत्यु को प्राप्त होने लगे ।२६। शिव की इच्छा रूप महाशक्ति से वह शिवगण मरने लगे, यह बात विचित्र-सी हुई ।२७। इसे देखकर इन्द्रादि देवता, मरुद्गण, विश्वेदेवा, अश्विनी-कुमार तथा सब लोकपाल मौन बैठे रहे ।२८।

केचिद्विष्णु प्रभु तत्र प्रार्थयन्तः समन्ततः ।
उद्विग्ना मन्त्रयन्तश्च विघ्नाभावं मुहुर्मुहुः ।२९।
सुविचार्योदर्कफलं महोद्विग्नाः सुबुद्धयः ।
सुरविष्णवादयोऽभूवंस्तन्नाशाद्रावणान्मुहुः ।३०।
एवंभूतस्तदा यज्ञो विघ्नो जातो दुरात्मनः ।
ब्रह्मबन्धोश्च दक्षस्य शंकरद्रोहिणो मुने ।३१।

किसी ने उस समय भगवान् विष्णु से प्रार्थना की, किसी ने उद्विग्न होकर विघ्नों के नष्ट होने की प्रार्थना की ।२९। आगामी परि-णाम को विचारते हुए विष्णु आदि चिन्ता करने लगे और विघ्न को नष्ट न कर सकने के कारण उनमें अत्यन्त उद्विग्नता हुई ।३०। इस प्रकार शिवद्रोही दुरात्मा दक्ष के यज्ञ में विघ्न उपस्थित हुआ ।३१।

दैव-वाणी द्वारा दक्ष की भर्त्सना और भविष्य-कथन

एतस्मिन्नन्तरे तत्र नभोवाणी मुनीश्वर ।
अवोचच्छृण्वतां दक्षसुरादीनां यथार्थतः ।१।
रे रे दक्ष दुराचार दम्भाचारपरायण ।
किं कृतं ते महामूढ कर्म चानर्थकारकम् ।२।
न कृतं शैवराजस्य दधीचेर्वचनस्य हि ।
प्रमाणं तत्कृते मूढ सर्वानन्दकरं शुभम् ।३।
निर्गतस्ते मखाद्विप्रः शापं दत्वा सुदुःसहम् ।

ततोऽपि बुद्धं किंचिन्नो त्वया मूढेन चेतसि ।४।
ततः कृतः कथं चैव स्वपुत्र्यास्त्वादरः परः ।
समागतायाः सत्याश्च मङ्गलाया गृहं स्वतः ।५।
सतीभवौ नार्चितौ हि किमिदं ज्ञानदुर्बल ।
ब्रह्मपुत्र इति वृथा गर्वितोऽसि विमोहितः ।६।
सा सत्येव सदाराध्या सर्वपापफलप्रदा ।
त्रिलोकमाता कल्याणी शङ्कराद्धांगभागिनी ।७।

ब्रह्माजी ने कहा—हे मुनीश्वर ! दक्ष और देवता आदि सभी के सम्मुख उसी समय वहां आकाशवाणी हुई—।१। हे दुराचारी दक्ष ! तूने दम्भ में भर कर यह कैसा अनर्थ-कर्म कर डाला है ? ।२। अरे मूर्ख ! तूने शैव्यराज दधीचि के सर्वानन्ददायक वचनों पर भी ध्यान नहीं दिया ।३। वह ब्राह्मण तुझे घोर शाप देकर तेरे यज्ञ से उठ कर चला गया, तो भी तू अपने चित्त में कुछ भी न समझ सका ।४। फिर तूने अपनी कन्या का भी तिरस्कार किया, वह मङ्गलमयी सती स्वयं तेरे घर पर उपस्थित हुई थी ।५। हे मूर्ख ! तूने शिवा और शिव का अनादर किया, तुझे ब्रह्मा का पुत्र होने का घोर अहङ्कार है ।६। तुझे सर्वपुण्यदात्री सती की आराधना करनी चाहिए थी, वह त्रैलोक्य माता शिवजी के अर्द्धांग में सदा निवास करती थी ।७।

सा सत्येवार्चिता नित्यं सर्वसौभाग्यदायिनी ।
माहेश्वरी स्वभक्तानां सर्वमङ्गलदायिनी ।८।
सा सत्येवार्चिता नित्य संसारभयनाशिनी ।
मनोऽभीष्टप्रदा देवी सर्वोपद्रवहारिणी ।९।
सा सत्येवार्चिता नित्यं कीर्तिसम्पत्प्रदायिनी ।
परमा परमेशानी भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी ।१०।
सा सत्येव जगद्धात्री जगद्रक्षणकारिणी ।
अनादिशक्तिः कल्पान्ते जगत्संहारकारिणी ।११।
सा सत्येव जगन्माया विष्णुमाता विलासिनी ।
ब्रह्मेन्द्रचन्द्रवह्न्यर्कदेवादिजननी स्मृता ।१२।

सा सत्यैव तपोधर्मदानादिफलदायिनी ।
शम्भुशक्तिर्महादेवी दुष्टहर्त्री परात्परा ।१३।
ईदृग्विधा सती देवी यस्य पत्नी सदा प्रिया ।
तस्मै भागो न दत्तस्ते मूढेन कुविचारिणा ।१४।

वह माहेश्वरी अपने भक्तों को सदा मङ्गलदायिनी है, तुझे उस सौभाग्यदात्री सती की सेवा करनी चाहिए थी ।८। वह नित्य पूजन करने से जगत के भय को दूर करने वाली, कामना की देने वाली और सभी उपद्रवों को नष्ट करने वाली थी ।९। नित्य पूजन से वह कीर्त्ति और वैभव के देने वाली तथा भुक्ति-मुक्ति प्रदायिनी परमेशानि थी ।१०। वह विश्वमाता सती संसार की रक्षा करने वाली तथा कल्प के अन्त में संहार करने वाली अनादि शक्ति हैं ।११। सती ही संसार की माता, विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, अग्नि चन्द्रमा तथा सूर्यादि सभी की जननी है ।१२। वही तप, दान, का धर्म का फल देने वाली, शिवजी की शक्ति, महादेवी, दुष्टों का संहार करने वाली तथा परे से भी परे है ।१३। इस प्रकार वह सती जिसकी प्राणवल्लभा थी, उसे तूने यज्ञ भाग भी नहीं दिया ।१४।

शम्भुर्हि परमेशानः सर्वस्वामी परात्परः ।
विष्णुब्रह्मादिसंसेव्यः सर्वकल्याणकारकः ।१५।
तप्यते हि तपः सिद्धैरेतद्दर्शनकांक्षिभिः ।
युज्यते योगिभिर्योगैरेतद्दर्शनकांक्षिभिः ।१६।
अनन्त धनधान्यानां यागादीनां तथैव च ।
दर्शन शङ्करस्यैव महत्फलमुदाहृतम् ।१७।
शिव एव जगद्धाता सर्वविद्यापतिः प्रभु ।
आदिविद्याधरः स्वामी सर्वमङ्गलमङ्गलः ।१८।
तच्छक्तेनकृतो यस्मात्सत्कारोऽद्य त्वया खल ।
अत एवाध्वरास्यास्य विनाशो हि भविष्यति ।१९।
अमङ्गलं भवत्येव पूजार्हाणामपूजया ।
पूज्यमाना च नास्तीहि यतः पूज्यतमा शिवा ।२०।

सहस्रेणापि शिरसां शेषो यत्पादजं रजः ।
वहत्यहरहः प्रीत्या शक्तिः शिवा सतां ।२१।

भगवान् शंकर ही सबके अधीश्वर एवं ब्रह्मा विष्णु आदि से सेवित हैं, वही सब का कल्याण करने वाले हैं ।१५। इनके दर्शनों की कामना से ही सिद्धजन तपस्या करते हैं और योगीजन योगाभ्यास में लीन रहते हैं ।१६। अनन्त धन, धान्य तथा यज्ञादि का जो फल होता है, वह फल भगवान् शंकर के दर्शन मात्र से प्राप्त हो जाता है ।१७। वही विश्व के धाता तथा सभी विद्याओं के अधीश्वर हैं, वही आदि-विद्या के अधिपति तथा मंगलों के भी मंगलकर्त्ता हैं ।१८। तूने मूर्खतावश उनकी शक्ति का सत्कार न कर निरादर किया, इस कारण तेरा यज्ञ नष्ट हो जायगा ।१९। जहाँ पूजन के योग्य पुरुषों का पूजन नहीं होता, वहाँ अमंगल होना स्वाभाविक है ।२०। जिसकी चरण-रज को शेषजी अपने हजार शिर से प्रीति सहित धारण करते हैं, यह वही शिवा है ।२१।

यत्पादपद्ममनिशं ध्यात्वा सम्पूज्य सादरम् ।
विष्णुर्विष्णुत्वमापन्नस्तस्य शम्भोः प्रिया सती ।२२।
यत्पादपद्ममनिशं ध्यात्वा सम्पूज्य सादरम् ।
ब्रह्माब्रह्मत्वमापन्नस्तस्य शम्भोः प्रिया सती ।२३।
यत्पादपद्ममनिशं ध्यात्वा सम्पूज्य सादरम् ।
इन्द्रादयो लोकपालाः प्रापुः स्वं स्वं परं पदम् ।२४।
जगत्पिता शिवः शक्तिर्जगन्माता च सा सती ।
सत्कृतौ न त्वया मूढ कथं श्रेयो भविष्यति ।२५।
दौर्भाग्यं त्वयि संक्रांतं संक्रांतास्त्वयि चापदः ।
यौ चानाराधितौ भक्त्या भवानीशंकरौ च तौ ।२६।
अनभ्यर्च्य शिवं शम्भु कल्याण प्राप्नुयामिति ।
किमस्ति गर्वो दुर्वारः स गर्वोऽद्य विनश्यति ।२७।
सर्वेशविमुखो भूत्वा देवेष्वेतेषु कस्तव ।
करिष्यति सहायं तं न ते पश्यामि सर्वथा ।।२८

जिसके चरणों का निरन्तर ध्यान करने से विष्णु को विष्णुत्व की प्राप्ति हुई है, यह वही शिवा है ।२२। जिसके चरणों का ध्यान और पूजन करने से ब्रह्मा को ब्रह्मत्व की प्राप्ति हुई है, यह वही शिवा है ।२३। जिसके चरणों के ध्यान और पूजन से इन्द्र आदि लोकपालों को उनके पद की प्राप्ति हुई है, यह वही शिवा है ।२४। यह शिवा ही जगत् की माता और शिव ही जगन्पिता हैं, अरे मूर्ख तूने उनका निरादर किया है तो तेरा कल्याण किस प्रकार सम्भव है ? ।२५। तेरा दुर्भाग्य उपस्थित हो गया जो तूने भक्तिपूर्वक उस भवानी की और शिव की आराधना नहीं की ।२६। 'शिव के पूजन बिना ही मैं अपना मङ्गल कर लूँगा' तेरा यह मिथ्या गर्व आज खण्डित हो जायगा ।२७। सर्वेश्वर शिव से विरोध लेकर कौन-सा देवता तेरी सहायता करेगा ? मैं तो ऐसा कोई भी नहीं देखता ।२८।

यदि देवा: करिष्यन्ति साहाय्यमधुना तव ।
तदा नाशं समाप्स्यन्ति शलभा इव वह्निना ।२९।
ज्वलत्वद्य मुखं ते वै यज्ञध्वंसो भवत्विति ।
सहायास्तव यावन्तस्ते ज्वलंत्वद्य सत्वरम् ।३०।
अमराणां च सर्वेषां शपथोऽमंगलाय ते ।
करिष्यन्त्यद्य साहाय्यं यदेतस्य दुरात्मन: ।३१।
निगच्छत्वमरा: स्वोकमेतदध्वरमंडपात् ।
अन्यथा भवतो नाशो भविष्यत्यद्य सर्वथा ।३२
निर्गच्छंत्वपरे सर्वे मुनिनागादयो मखात् ।
अन्यथा भवतां नाशो भविष्यत्यद्य सर्वथा ।३३।
निगच्छ त्वं हरे शीघ्रमेतदध्वरमंडपात् ।
अन्यथा भवतो नाशो भविष्यत्यद्य सर्वथा ।३४
निर्गच्छ त्वं विधे शीधे शीघ्रमेतदध्वरमंडपात् ।
अन्यथा भवतो नाशो भविष्यत्यद्य सर्वथा ।३५
इत्युक्त्वाध्वरशालायामखिलायां सुसंस्थितान् ।
व्यरमत्सा नभोवाणी सर्वकल्याणकारिणी ।३६

तच्छ्रुत्वा व्योमवचनं सर्वे हर्यादयः सुराः ।
अकार्षुर्विस्मयं तात मनुष्यश्च तथाऽपरे ।३७।

इस समय जो देवता तेरी सहायता करेंगे वे भी इस प्रकार नष्ट हो जायेंगे, जैसे अग्नि में शलभ भस्म हो जाता है ।२९। तेरा मुख भस्म हो जाय, तेरे सभी सहायक भस्म हो जाँय और तेरा यज्ञ भी विध्वंस हो जाय ।३०। सभी देवताओं को अमङ्गलार्थ शपथ है यदि कोई इस दुरात्मा की सहायता करे ।३१। सब देवता इस यज्ञ मंडप से शीघ्र ही बाहर हो जाँय, अन्यथा उनका सर्वथा नाश हो जायगा ।३२। मुनिगण और नाग आदि भी शीघ्र ही यहाँ से चले जाँय, अन्यथा वे नष्ट हो जाँयगे ।३३। हे विष्णो ! तुम भी इस मण्डप से शीघ्र चले जाओ, अन्यथा तुम्हारा भी नाश हो जायगा ।३४। हे ब्रह्मा ! तुम भी इस स्थान से शीघ्र ही बाहर चले जाओ, अन्यथा तुम भी नष्ट हो जाओगे ।३५। ब्रह्माजी ने कहा—इस प्रकार यज्ञशाला में सबकी उपस्थित में वह आकाशवाणी सबके कल्याणार्थ उपदेश कर मौन हो गई ।३६। विष्णु आदि सभी देवता और मुनिगण आकाशवाणी को सुनकर अत्यन्त आश्चर्य मानने लगे ।३७।

सती-मरण सुनकर शिवजी का वीरभद्र को प्रकट करना

श्रुत्वाव्योमगिरं दक्षः किमकार्षीत्तदाऽबुधः ।
अन्ये च कृतवन्तः कि ततश्च किमभूद्वद ।१।
पराजिताः शिवगणा भृगुमन्त्रबलेन वै ।
किमकार्षुः कुत्र गतास्तत्वं वद महामते ।२।
श्रुत्वा व्योमगिरं सर्वे विस्मिताश्च सुरादयः ।
नवोचकिञ्चिदपि ते तिष्ठन्तुस्तु विमोहिताः ।३।
पलायमाना ये वीरा भृगुमन्त्रबलेन ते ।
अवशिष्टाः शिवगणाः शिव शरणमाययुः ।४।
सर्वं निवेदयामासू रुद्रायामिततेजसे ।
चरित्रं च तथाभूतसुप्रणम्यादराच्च ते ।५।

देवदेव महादेव पाहि नः शरणागतान् ।
संश्रृण्वादरतो नाथ सतीवार्तां च विस्तरात् ।६।
गर्वितेन महेशान दक्षेण सुदुरात्मना ।
अपमानः कृतः सत्याऽनादरो निजरैस्तथा ।७।

नारदजी ने पूछा—आकाशवाणी को सुनकर उस अदूरदर्शी दक्ष ने तथा वहाँ उपस्थित अन्य व्यक्तियों ने क्या किया, यह मेरे प्रति कहिये ।१। जब शिवगण भृगु के मन्त्र बल से परास्त हो गए तब उन्होंने क्या किया और वे कहाँ गये ? इस सब वृत्तान्त को मुझ से कहिये ।२। ब्रह्मा जी ने कहा—आकाशवाणी सुनकर सभी देवता आश्चर्य चकित होकर मौन का अवलम्बन कर बैठे रहे ।३। उधर भृगु के मन्त्र से परास्त होकर भागे हुए शिवगण शिवजी की शरण में पहुँचे ।४। और उनके समक्ष उपस्थित होकर प्रणाम किया तथा आदर सहित सम्पूर्ण वृत्तान्त उन्हें सुनाया ।५। गणों ने कहा —हे देव देव ! हम शरणागतों की रक्षा करिए । हे प्रभो ! आप विस्तारपूर्वक सती की बात सुनें ।६। हे प्रभो ! उस दुरात्मा दक्ष ने अत्यन्त अहङ्कारपूर्वक देवताओं सहित सती का तिरस्कार किया ।७।

तुभ्यं भागमदान्नः स देवेभ्यश्च प्रदत्तवान् ।
दुर्वचांस्यवदत्प्रोच्चैर्दुष्टो दक्षः सुगर्वितः ।८।
ततो दृष्ट्वा न ते भाग यज्ञेऽकुप्यत्सती प्रभो ।
विनिंद्य बहुशस्तातमधाक्षीत्स्वतनुं तदा ।९।
गणास्त्वयुतसंख्या का मृतास्तत्र विलज्जया ।
स्वांगान्याच्छिद्य शस्त्रैश्चक्नुध्यामह्यपरेत्वयम् ।।१०।
तद्यज्ञं ध्वंसितुं वेगात्सन्नद्धास्तु भयावहाः ।
तिरस्कृता हि भृगुणा स्वप्रभावाद्विरोधिना ।११।
ते वयं शरणं प्राप्तास्तव विश्वम्भर प्रभो ।
निर्दयान् कुरु नस्तस्माद्‌दयमान भवद्भयात् । ।१२।
अपमानं विशेषेण तस्मिन् यज्ञे महाप्रभो ।
दक्षाद्यास्तेऽखिला दुष्टा अकुर्वन् गर्विता अति ।१३।

इत्युक्तं निखिलं वृत्तं स्वेषां सत्याश्चनारद ।
तेषां च मूढ़ बुद्धीनां यथेच्छसि तथा कुरु ।१४।

आपको यज्ञ भाग न देकर अन्य सभी देवताओं को दिया और अहङ्कार पूर्वक बहुत-से दुर्वचन दक्ष ने कहे हैं ।८। हे नाथ ! आपका भाग यज्ञ में न देखकर सती को अत्यन्त क्रोध हुआ और उन्होंने अपने पिता की अनेक प्रकार से भर्त्सना करके अपने देह का त्याग कर दिया ।९। लज्जा के कारण हजारों शिवगणों ने वहाँ अपने अंगों को काटकर प्राण त्याग दिये, परन्तु जब हम उसे मारने और यज्ञ विध्वंस करने लगे, तब आपके विरोधी भृगु ने मन्त्र बल से हमको रोक दिया ।१०-११। हे प्रभो ! हम भयभीत होकर आपके शरण में आये हैं, हमारा निर्दयता पूर्वक पराभव हुआ है, हमको भय रहित कीजिए, हे नाथ ! हम पर दया करिए ।१२। हे शंकर ! हमारा उस यज्ञ में घोर अपमान हुआ है, उन दुष्ट दक्ष आदि ने हमारा पूर्ण तिरस्कार किया है ।१३। हमने सती की और अपनी सम्पूर्ण वार्ता आपसे निवेदन कर दी, अब आप जैसा उचित समझें, वैसा ही करें ।१४।

इत्याकर्ण्य वचस्तस्य स्वगणानां वचः प्रभुः ।
सस्मार नारदं सर्वं ज्ञातुं तच्चरितं लघु ।१५।
आगतस्त्वं द्रुतं तत्र देवर्षे दिव्यदर्शनः ।
प्रणम्य शंकरं भक्त्या सांजलिस्तत्र तस्थिवान् ।१६।
त्वां प्रशस्याथ स स्वामी सत्या वार्ता च पृष्टवान् ।
दक्षयज्ञगतायाा वै परं च चरितं तथा ।१७।
पृष्टेव शंभुना ताता त्वयाऽऽश्वेव शिवात्मना ।
तत्सर्वं कथितं वृत्तं जातं दक्षाध्वरे हि यत् ।१८
तदाकर्ण्येश्वरो वाक्यं मुने तत्वन्मुखोदितम् ।
चुकोपातिद्रुतं रुद्रो महारौद्रपराक्रमः ।१९।
उत्पाट्यैकां जटां रुद्रो लोकसंहार कारकः ।
आस्फालयामास रुषा पर्वतस्य तदोपरि ।२०।

तोदनाच्च द्विधा भूता सा जटा च मुने प्रभोः ।
सम्बभूव महारावो महाप्रलयभीषणः ।२१।

ब्रह्माजी ने कहा—इस प्रकार अपने गणों की बात सुनकर उस चरित्र को शीघ्र जान लेने की इच्छा से भगवान् शंकर ने नारदजी को याद किया ।१५। तब, हे दिव्य-दर्शन नारदजी ! तुम तुरन्त ही वहाँ पहुँचे और शिवजी को भक्तिपूर्वक प्रणाम कर हाथ जोड़े ।१६। उस समय शिव ने तुम्हारीं प्रशंसा करके सती का वृत्तान्त तथा दक्ष-यज्ञ में जाने का सम्पूर्ण समाचार कहने को कहा ।१७। शिवजी द्वारा ऐसा प्रश्न करने पर वहाँ जो कुछ घटना घटी थी, वह सब तुमने उनको सुनाई ।१८। तुम्हारे मुख से सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनकर शिवजी अत्यन्त क्रोधित होकर महारौद्र रूप हो गए ।१९। लोक संहारक रुद्र ने अपनी एक जटा उखाड़ क्रोधपूर्वक पर्वत पर दे मारी ।२०। जटा के मारते ही उसके दो खण्ड हो गए और उससे महाप्रलय के समान भयङ्कर शब्द हुआ ।२१।

तज्जटायाः समुद्भूतो वीरभद्रो महाबलः ।
पूर्व भागेन देवर्षे महाभीमो गणाग्रणीः ।२२।
स भूमिं विश्वतोवृत्य चात्यतिष्ठद्दशांगुलम् ।
प्रलयानलसंकाशः प्रोन्नतो दोः सहस्रवान् ।२३।
कोप निःश्वासतस्तत्र महारुद्रस्य चेशितुः ।
जातं ज्वराणां शतकं संनिपातास्त्रयोदश ।२४।
महाकाली समुत्पन्ना तज्जटापरभागतः ।
महाभयंकरा तात भूतकोटिभिरावृता ।२५।
सर्वे मूर्तिधराः क्रूरा ज्वरा लोकभयंकराः ।
स्वतेजसा प्रज्वलंतो दहंत इव सर्वतः ।२६।
अथ वीरो वीरभद्रः प्रणम्य परमेश्वरम् ।
कृतांजलिपुटः प्राह वाक्य वाक्यविशारदः ।२७।
महारुद्र महारौद्र सोमसूर्याग्निलोचन ।
किं कर्त्तव्यं मया कार्यं शीघ्रमाज्ञापय प्रभो ।२८।

उस जटा से महाबली वीरभद्र प्रकट हुआ। जटा के पूर्व भाग से उत्पन्न यह वीर, वीरों में अग्रणी तथा अत्यन्त भयङ्कर था।२२। इसने सम्पूर्ण पृथिवी को व्याप्त कर लिया तथा वह दश अंगुल परिमाण स्थान में स्थित था। वह प्रलय की अग्नि के समान तेजस्वी था और उसके दो हजार भुजाएँ थीं।२३। महारुद्र के क्रोध से उस समय सौ ज्वर और तेरह प्रकार के सन्निपात उत्पन्न हुए।२४। जटा के दूसरे भाग से महाकाली उत्पन्न हुई, वह महा भयङ्कर और करोड़ भूतों से घिरी हुई थीं।२५। यह सभी महा भयङ्कर क्रूर स्वरूप वाले थे, वे अपने तेज से प्रज्वलित हुए सब दिशाओं को दग्ध करते हुए से प्रतीत होते थे।२६। उस समय वह वीरभद्र शिवजी को प्रणाम कर हाथ जोड़ता हुआ इस प्रकार कहने लगा।२७। वीरभद्र ने कहा—हे महारुद्र! हे सोम सूर्य और अग्नि जैसे नेत्र वाले! मुझे क्या कार्य करना है, इसकी शीघ्र ही आज्ञा दीजिए।२८।

शोषणीयाः किमीशान क्षणार्द्धेनैव सिंधवः।
पेषणीयाः किमीशान क्षणार्द्धेनैव पर्वताः।२९।
क्षणेन भस्मसात्कुर्यां ब्रह्मांडमुत किं हर।
क्षणेन भस्मसात्कुर्यां सुरान्वा किं मुनीश्वरान्।३०
व्याश्वासः सर्व लोकानां किमुकार्यो हि शंकर।
कर्तव्यं किमुतेशान सर्वप्राणिविहिंसनम्।३१।
ममाशक्यं न कुत्रापि त्वत्प्रसादान्महेश्वर।
पराक्रमेण मत्तुल्यो न भूतो न भविष्यति।३२।
यत्र यत्कार्यमुदिश्य प्रेषयिष्यसि मां प्रभो।
तत्कार्यं साधयाम्येव सत्वरं त्वत्प्रसादतः।३३।
क्षुद्रास्तरन्ति लोकाब्धि शासनाच्छंकरस्यते।
हरातोऽहं न किं तर्तुं महापत्सागरं क्षमः।३४।
त्वत्प्रेषिततृणेनापि महत्कार्यमयत्नतः।
क्षणेन शक्यये कर्तुं शंकरात्र न संशयः।३५।

हे ईशान! आज्ञा हो तो क्षणमात्र में समुद्र का शोषण कर डालूँ

अथवा क्षण मात्र में ही पर्वतों को चूर्ण कर डालूँ।२९। हे शंकर ! क्षण मात्र में ब्रह्माण्ड को भस्म करदूँ या देवताओं और मुनीश्वरों को दग्ध कर डालूँ।३०। सब लोकों को अस्त-व्यस्त करदूँ।३१। अथवा सब प्राणियों को ही नष्ट कर डालूँ। आपके प्रसाद से मैं सब कुछ करने में समर्थ हूँ क्योंकि मेरे समान पराक्रमी न कोई हुआ न होगा।३२। हे नाथ ! आप जिस-जिस कार्य के लिए जहाँ-जहाँ मुझे भेजेंगे, मैं वहीं-वहीं जाकर उस-उस कार्य को करूँगा।३२। हे शंकर ! आपके शासन से क्षुद्र प्राणी भी भवसागर से तर जाते हैं, तो क्या मैं आपकी कृपा से महा विपत्ति के सागर से तरने में अशक्य हूँ ?।३४। आपकी कृपा से तिनका भी महान् कार्य करने में समर्थ होता है और क्षणभर में कर सकता है, इसमें संशय नहीं है ३५।

लीलामात्रेण ते शम्भो कार्यं यद्यपि सिद्ध्यति।
तथाप्यहं प्रेषणीयस्तवैवानुग्रहो ह्ययम्।३५।
शक्तिरेतादृशी शम्भो ममापि त्वदनुग्रहात्।
बिना शक्तिर्न कस्यापि शंकर त्वदनुग्रहात्।३७।
त्वदाज्ञया विना कोऽपि तृणादीनि वस्तुतः।
नव चालयितुं शक्तः सत्यमेतन्न संशयः।३८।
शम्भो नियम्याः सर्वेऽपि देवाद्यस्ते महेश्वर।
तथैवाहं नियम्यस्ते नियन्तुः सर्वदेहिनाम्।३९।
प्रणतोऽस्मि महादेव भूयोऽपि प्रणतोऽस्म्यहम्।
प्रेषय स्वेष्टसिद्ध्यर्थं मामाद्य हर सत्वरम्।४०।
स्पन्दोऽपि जायते शम्भो सव्याङ्गानां मुहुर्मुहुः।
भविष्यत्यद्यविजयो मामतः प्रेषयः प्रभो।४१।
हर्षोत्साहविशेषोऽपि जायते मम कश्चन।
शम्भो त्वत्पादकमले संसक्तश्च मनो मम।४२।

हे प्रभो ! यद्यपि आपकी लीला से ही सब कार्य पूर्ण हो जाते हैं, फिर भी आप कृपा करके मुझे कार्यं के लिए भेजिए।३६। हे नाथ ! आपके अनुग्रह से मुझ में जो शक्ति है, वह आपकी कृपा के अभाव में कभी

सम्भव नहीं है ।३७। आपकी आज्ञा के बिना कोई तिनके को भी चलायमान नहीं करता, यह मैं सत्य ही कह रहा हूँ ।३८। हे शिव ! जैसे सब देवता आपके नियम में स्थित हैं, वैसे ही मैं भी आपके नियम में पूर्णतया स्थित हूँ ।३६। हे शंकर मैं आपको बारम्बार प्रणाम करता हूँ, आप अपनी इच्छा पूर्ति के लिए मुझे अवश्य भेजिये ।४०। हे प्रभो ! मेरे दक्षिण अंग निरन्तर फड़क रहे हैं, आप मुझे जहाँ कहीं भेजेंगे, वहीं विजय होना निश्चित है ।४१। हे प्रभो ! मेरा मन आपके पद-पद्मों में है और मुझे एक विशेष प्रकार का उत्साह तथा हर्ष हो रहा है ।४२।

भविष्यत्यति प्रतिपद शुभसन्तानसततिः ।४३।
तस्यैव विजयो नित्यं तस्यैव शुभमन्वहम् ।
यस्य शम्भो दृढा भक्तिस्त्वयि शोभनसंश्रये ।४४।
इत्युक्तं तद्वचः श्रुत्वा सन्तुष्टो मङ्गलापति ।
वीरभद्र जयेति त्वं प्रोक्ताशीः प्राह तं पुनः ।४५।
शृणु मद्वचनं तात वीरभद्र सुचेतसा ।
करणीयं प्रयत्नेन तद्द्रुतं मे प्रतोषकम् ।४६।
यागं कर्तुं समुद्युक्तो दक्षो विधिसुतः खलः ।
मद्विरोधी विशेषेण महागर्वोऽबुधोऽधुना ।४७
तन्मखं भस्मात्कृत्वा सयागपरिवारकम् ।
पुनरायाहि मत्स्थानं सत्वरं गणसत्तम ।४८।
सुरा भवतु गन्धर्वा यक्षा वान्ये च केचन ।
तानप्यद्यैव सहसा भस्मसात्कुरु सत्वरम् ।४६।

अच्छी सन्तान की सन्तति भी प्रत्येक पद में अच्छी ही होती है ।४३। आप सुन्दर आश्रय वाले शंकर के चरणों में जिसकी भक्ति हो, उसी की नित्य विजय तथा सब प्रकार मङ्गल होगा ।४४। ब्रह्माजी ने कहा—भगवान् शङ्कर उसके वचनों से सन्तुष्ट हो गए और उन्होंने वीरभद्र ! तेरी जय हो । इस प्रकार उसे आशीर्वाद दिया ।४५। शिवजी बोले—हे वीरभद्र ! तुम श्रेष्ठ मन से मेरी बात सुनो और मेरे सन्तोष के लिए मेरा आदेश पालन करो ।४६। वह दुष्ट ब्रह्मपुत्र दक्ष यज्ञ कर

रहा है, वह मेरा द्रोही, मूर्ख तथा घोर अहङ्कारी है ।४७। सपरिवार उसका यज्ञ नष्ट करके तुम शीघ्र ही मेरे पास लौट आओ ।४८। वहाँ देवता, गन्धर्व जो कोई भी उपस्थित हों, उन सभी को भस्म कर डालो ।४८।

तत्रास्तु विष्णुर्ब्रह्मा वा शचीशो वा यमोऽपि वा ।
अपि चाद्यैव तान्सर्वान्पातयस्व प्रयत्नतः ।५०।
सुरा भवन्तु गन्धर्वा यक्षा वान्ये च केचन ।
तानप्यद्यैव सहसा भस्मसात्कुरु सत्वरम् ।५१।
दधीचिकृतमुल्लंघ्य शपथं मयि तत्र ये ।
तिष्ठन्ति ते प्रयत्नेन ज्वालनीयास्त्वया ध्रुवम् ।५२।
प्रथमाश्चागमिष्यन्ति यदि विष्णुवादयो भ्रमात् ।
नानाकर्षणमन्त्रेण ज्वालयाऽऽनीय सत्वरम् ।५३।
ये तत्रोल्लघ्य शपथं मदीयं गर्विताः स्थिताः ।
ते हि मद्द्रोहिणीऽतस्तान् ज्वालयानलमालया ।५४।
सपत्नीकान्ससारांश्च दक्षयागस्थलस्थितान् ।
प्रज्वाल्य भस्मसात्कृत्वा पुनरायाहि सत्वरम् ।५५।
तत्र त्वयि गते देवा विश्वाद्या अपि सादरम् ।
स्तोष्यन्ति त्वां तदात्याशु ज्वालया ज्वालयैव तान् ।५६

विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, यम जो कोई वहाँ मिले, उसी को नष्ट कर दो ।५०। देव, गन्धर्व, यक्ष जो कोई हो उसे दग्ध करो ।५१। दधीचि की शपथ को उल्लंघन कर जो कोई वहाँ स्थित रहे, उन सभी को भस्म कर दो ।५१। यदि विष्णु भी उनके साथ कोई भ्रमपूर्ण कार्य करें तो अनेक प्रकार के आकर्षण मन्त्रों द्वारा उन्हें जला दो ।५३। उस ऋषि की शपथ का उल्लंघन करके वहाँ ठहरने वाले सभी मेरे द्रोही हैं उन्हें अग्नि-लपटों से भस्म कर दो ।५४। जो भी स्त्री धन आदि के सहित दक्ष यज्ञ में स्थित हों, उन सभी को भस्म करके मेरे पास शीघ्र लौट आओ ।५५। तुम्हारे वहाँ पहुँचने पर यदि विश्वेदेवा आदि देवता तुम्हारी स्तुति करें तो भी उन्हें न छोड़ना और भस्म कर देना ।५६।

देवानापि कृतद्रोहान् ज्वालमालासमाकुलैः ।
ज्वालय ज्वलनैः शीघ्रं मामाध्यायपालकम् ।५७।
दक्षादीन्सकलांस्तत्र सपत्नीकन्सबांधवान् ।
प्रज्वाल्य वीर दक्षं नु सलीलं सलिलं पिब ।५८।
इत्युक्त्वा रोषताम्राक्षो वेद्मर्यादपालकः ।
विरराम महावीरं कालारिः सकलेश्वरः ।५९।

जो देवता हमारे द्रोही हैं, उनको शीघ्र ही अग्नि की लपटों से भस्म कर देना । उनके मन्त्र पालक होने का भी ध्यान न करना ।५७। सपत्नीक गन्धर्वादि सहित दक्ष आदि को भस्म करके फिर नील धारा का जलपान करना ।५८। ब्रह्माजी ने कहा कि वेद मर्यादा का पालन करने वाले भगवान् शङ्कर क्रोध से रक्तवर्ण युक्त नेत्र वाले तथा काल के भी शत्रु वीरभद्र से ऐसा कह कर मौन हो गए ।५९।

वीरभद्र का सेना सहित गमन

इत्युक्तं श्रीमहेशस्य श्रुत्वा वचनमादरात् ।
वीरभद्रोऽतिसंतुष्टः प्रणनाम महेश्वरम् ।१।
शासनं शिरसा धृत्वा देवदेवस्य शूलिनः ।
प्रचचाल ततः शीघ्रं वीरभद्रो मखं प्रति ।२।
शिवोऽथ प्रेषयामास शोभार्थं कोटिशो गणान् ।
तेन सार्द्धं महावीरान्प्रलयानलसन्निभान् ।३।
अथं ते वीरभद्रस्य पुरतः प्रबला गणाः ।
पश्चादपि ययुर्वीराः कुतूहलकरा गणाः ।४।
वीरभद्रसमेता ये गणाः शतसहस्रशः ।
पाषदाः कालकालस्य सर्वेरुद्रस्वरूपिणः ।५।
गणैः समेतः किलः तैर्महात्मा स वीरभद्रो हरवेषभूषणः ।
सहस्रबाहुर्भुजगाधिपाढ्यो ययौ रथस्थः प्रबलोऽतिभीकरः ।।
नल्वानां च सहस्रे द्वे प्रमाणं स्यन्दनस्य हि ।
अयुतेनैव सिंहानां पाहनानां प्रयत्नतः ।७।

ब्रह्माजी ने कहा—शिवजी के उक्त वचनों को आदरपूर्वक सुन कर अत्यन्त सन्तोष सहित वीरभद्र ने उन्हें प्रणाम किया ।१। देवदेव महादेव के शासन को शीश चढ़ाकर वीरभद्र तुरन्त ही यज्ञ स्थान को चल पड़ा ।२। शिव ने भी शोभा के लिए करोड़ों गणों को उसके साथ भेजा जो कि प्रलयाग्नि के समान वीरभद्र के पीछे-पीछे चले ।३। उस समय वे महाबली गण कुछ वीरभद्र के आगे और कुछ पीछे हो लिए और मार्ग में कुतूहल करने लगे ।४। वीरभद्र के साथ जो गण चले वे सभी काल के भी काल तथा साक्षात् रुद्र रूप थे ।५। वीरभद्र भी शिवजी जैसा वेश धारण किए हुए था । वह सहस्र भुजा वाला, सर्पों को लपेटे हुए, महाप्रबल शत्रुओं का भी भयभीत करने वाला था, वह रथारूढ़ होकर चला ।६। उसके रथ का प्रमाण दो हजार नल्व था, उस रथ में दश हजार सिंह जुते हुए थे ।७।

तथैव प्रबलाः सिंहा बहवः पार्श्वरक्षकः ।
शार्दूला मकरा मत्स्या गजास्तत्र सहस्रशः ।८।

वीरभद्रे प्रचलिते दक्षनाशाय सत्वरम् ।
कल्पवृक्षसमुत्सृष्टा पुष्पवृष्टिरभूत्तदा ।९।

तष्टुवुश्च गणा वीरं शिपिविष्टे प्रवेष्टितम् ।
चक्रुः कुतूहलं सर्वे तस्मिश्च गमनोत्सवे ।१०।

काली कात्यायनी शानी चामुण्डा मुण्डमर्दिनी ।
भद्रकाली तथा भद्रा त्वरिता वैष्णवी तथा ।११।

एताभिर्नवदुर्गाभिर्महाकाली समन्विता ।
ययौ दक्षविनाशाय सर्वभूतगणैः सह ।१२।

डाकिनी शाकिनी चैव भूतप्रमथगुह्यकाः ।
कूष्मांडाः पर्पटाश्चैव चटका ब्रह्मराक्षसाः ।१३।

भैरवाः क्षेत्रपालाश्च दक्षयज्ञविनाशकाः ।
निर्ययुस्त्वरितं वीराः शिवाज्ञा प्रतिपालकः ।१४।

इसी प्रकार असंख्य सिंह पार्श्वरक्षक थे, तथा शार्दूल, मकर, मत्स्य और हाथी भी हजारों की संख्या में साथ थे।८। जब वीरभद्र दक्ष का संहार करने के लिए चला, तब उस पर कल्प-वृक्ष के पुष्पों की वृष्टि होने लगी।९। शिव-चेष्टा वाले उस वीरभद्र की शिवगण स्तुति करने लगे और उसके साथ चलते हुए सभी कुतूहल करने लगे।१०। काली, कात्यायनी, ईशानी, चामुण्डा, मुन्डमर्दिनी, भद्रकाली, भद्रा, त्वरिता तथा वैष्णवी।११। इन नौ दुर्गाओं के साथ महाकाली दक्ष-संहार के निमित्त उन भूतगणों के साथ चली।१२। डकिनी, शकिनी, भूत, प्रमथ, गुह्यक, कूष्माण्ड, पर्पट, चटक तथा ब्रह्मराक्षस।१३। भैरव, क्षेत्रपाल यह सभी शिवाज्ञा से दक्ष को नष्ट करने के निमित्त द्रुत गति से चले।१४।

तथैव योगिनीचक्रं चतुःषष्टिगणान्वितम्।
निर्ययौ सहसा क्रुद्धं दक्षयज्ञं विनाशितुम्।१५
तेषां गणानां सर्वेषां संख्यानं शृणु नारद।
महाबलवतां संघो मुख्यानां धैर्यशालिनाम्।१६।
अभ्ययाच्छंकुकर्णश्च दशकोट्या गणेश्वरः।
दशभिः केकराक्षश्च विकृतोऽष्टाभिरेव च।१७।
चतुःषष्ट्याः विशाखश्च नवभिः पारियात्रिकः।
षड्भिः सर्वांकको वीरस्तथेव विकृताननः।१८।
ज्वालकेशो द्वादशभिः कोटिभिर्गणपुंगवः।
सप्तभिः समद्वद्धीमान् दुद्रमीऽष्टाभिरेव च।१९।
पञ्चभिश्च कपालीशः षडभिः संदारको गणः।
कोटिकोटिभिरेवेह कोटिकुंडस्थैव च।२०।
विष्टंभोऽष्टाष्टभिर्वीरैः कोटिभिगणसत्तमः।
सहस्रकोटिभिस्तात संनादः पिप्पलस्तया।२१।

उन गणों के साथ चौंसठ योगनियाँ भी चलीं। यह सभी क्रोधपूर्वक दक्ष का विनाश करने के लिए उद्यत थे।१५। हे नारद ! उन गणों की संख्या मैं तुमसे कहता हूँ,उन महाबली तथा धैर्यशाली गणों में संघगण

मुख्य था ।१६। शंकुकर्ण दश करोड़ गण लेकर चला, केकराक्ष ने भी दश करोड़ तथा विकृत ने आठ करोड़ गण साथ लिए ।१७। विशाख के साथ चौंसठ करोड़, पारियात्र के साथ नौ करोड़, सर्वांकक के साथ छः करोड़ और वीर कृतानन के साथ छः करोड़ ।१८। गणश्रेष्ठ ज्वालाकोश के साथ बारह करोड़, समद् के साथ सात करोड़ और दद्रुम के साथ आठ करोड़ थे ।१९। कपालीश के साथ पाँच करोड़, संदारक के साथ छः करोड़ तथा कोटि और कुण्ड के साथ एक एक करोड़ थे ।२०। विष्टंभ-वीर के साथ आठ करोड़, वीर के साथ सात करोड़ तथा संनाद और पिप्पल के साथ हजार-हजार करोड़ चले ।२१।

आवेशनस्तथाष्टाभिरष्टाभिश्चन्द्रातापनः ।
महावेशः सहस्रेण कोटिता गणपो वृतः ।२२
कुण्डी द्वादशकोटिभिस्तथा पर्वतको मुने ।
विनाशितुं दक्षयज्ञं निर्ययौ गणसत्तमः ।२३
कालश्च कालकश्चैव महाकालस्तथैव च ।
कोटीनां शतकेनैव दक्षयज्ञं ययौ प्रति ।२४
अग्निकृच्छतकोट्या च कोट्याग्निमुख एव च ।
आदित्यमूर्द्धा कोट्या च तथा चैव घनावहः ।२५
सन्नाहःशतकोट्या च कोट्या च कुमुदो गणः ।
अमोघः कोकिलाश्चैव कोटिकोट्या गणाधिपः ।२६
काष्ठागूढश्चतुःषष्ट्या सुकेशी वृषभस्तथा ।
सुमन्त्रकोगणाधीशस्तथा तात सुनिर्ययौ ।२७
काकपादोदरः षष्ठिकोटिभिर्गणसत्तमः ।
तथा सन्तानकः षष्टिकोटिभिर्गणपुङ्गवः ।२८

आवेशन के साथ आठ करोड़, चन्द्रतापन के साथ भी आठ करोड़, महावेश गणपति के साथ सहस्र करोड़ चले ।२२। कुण्डी और पर्वतक ने बारह करोड़ सेना साथ लेकर दक्ष-नाश के निमित्त गमन किया ।२३। काल, कालक और महाकाल सौ-सौ करोड़ गण लेकर दक्ष-नाश के हेतु चले ।२४। अग्निकृत ने सौ करोड़, अग्निमुख ने एक करोड़, आदित्यमूर्धा

और घनावह ने भी एक-एक करोड़ सेना साथ ली ।२५। सन्नाह ने सौ करोड़, कुमुद ने एक करोड़, अमोघ तथा कोकिल गणाधिप ने भी एक-एक करोड़ गण साथ लिए ।२६। काष्ठागूढ़ सुकेशी, वृषभ गणाधीश और सुमन्त्रक यज्ञ चौंसठ-चौंसठ करोड़ गण लेकर चले ।२७। काकपादोदर ने साठ करोड़ तथा सन्तानक ने साठ करोड़ गण लिए ।२८।

महाबलश्च नवभिः कोटिभिः पुङ्गवस्तथा ।२९।
मधुपिंगस्तथा तात गणाधीशो हि निर्ययौ ।
नीतो नवत्या कोटीनां पूर्णभद्रस्तथैव च ।३०।
निर्ययौ शतकोटीभिश्चतुर्वक्त्रो गणाधिपः ।
काष्ठागूढश्चतुःषष्ट्या सुकेशो वृषभस्तथा ।३१।
विरूपाक्षश्च कोटीनां चतुःषष्ट्या गणेश्वरः ।
तालकेतुः षडास्यश्च पञ्चास्यश्च गणाधिपः ।३२।
संवर्तकस्तथा चैव कुलीशश्च स्वयं प्रभुः ।
लोकांतकश्च दीप्तात्मा तथा दैत्यान्तको मुने ।३३।
गणो भृङ्गी रिटिः श्रीमान् देवदेवप्रियस्तथा ।
अशनिर्भालकश्चैव चतुःषष्ट्या सहस्रकः ।३४।
कोटिकोटिसहस्राणां शतैर्विंशतिभिर्वृतः ।
वीरेशो ह्यमययाद्वीरो वीरभद्रः शिवाज्ञया ।।३५

श्रेष्ठगण महाबल ने नौ करोड़ गण लिए ।२९। गणाधीश मधुपिंग भी इसी प्रकार चला तथा नील और पूर्ण भद्र ने नव्वे करोड़ गण साथ लिए ।३०। चतुर्वक्र ने सौ करोड़ तथा काष्ठागूढ़, सुकेश और वृषभ ने चौंसठ करोड़ गणों को साथ लिया ।३१। गणेश्वर विरूपाक्ष ने चौंसठ करोड़ गण साथ लिये तथा तालुकेतु, षट्मुख, पञ्चमुख और गणेश्वर ।३२। सवर्तक कुलिश, लोकान्तक, दीप्तात्मा और दैत्यान्तक शिवजी के प्रिय भृङ्गीरिटि, अशनी और भालकगण ने चौंसठ हजार करोड़ सेना साथ ली ।३३-३४। इस प्रकार शिवाज्ञा से वीरभद्र हजारों, सैकड़ों, बीसियों करोड़ सेना से घिर कर चला ।३५।

भूतकोटिसहस्रैस्तु प्रययौ कोटिभिस्त्रिभिः ।
रोमजैः श्वगणैश्चैव तथा वीरो ययौ द्रुतम् ।३६।
तदा भेरी महानादः शंखाश्च विवधस्वनाः ।
जटाहरो मुखाश्चैव शृङ्गाणि विविधानि च ।३७।
ते तानि विततान्येव बन्धनानि सुखानि च ।
वादित्राणि विनेदुश्च विविधानि महोत्सवे ।३८
वीरभद्रस्य यात्रायां सबलस्य महामुने ।
शकुनान्यभवंस्तत्र भूरिणि सुखदानि च ।३९।

हजारों करोड़ भूत तथा तीन करोड़ अन्य जाति के भूत तथा रोमज और श्वगणों सहित वीरभद्र ने गमन किया ।३६। उस समय भेरी का तीक्ष्ण नाद होने लगा, जटाहार और मुखों के अनेक प्रकार के शब्द तथा शृङ्गों के शब्द होने लगे ।३७। बन्ध स्थानों पर सुखदायक शब्द बढ़ने लगे तथा वह उत्सव अनेक प्रकार के शब्दों से भर उठा ।३८। हे नारद ! बलवान वीरभद्र की यात्रा में सुख देने वाले अनेक शकुन होने लगे ।३९।

यज्ञ में दैवी उत्पातों का दर्शन

एवं प्रचलिते चास्मिन् वीरभद्रे गणान्विते ।
दुष्टचिह्नानि दक्षेण दृष्टानि विबुधैरपि ।१।
उत्पाता विवधाश्चासन् वीरभद्रे गणान्विये ।
त्रिविधा अपि देवर्षे यज्ञविध्वंससूचकाः ।२।
दक्षवामाक्षिब हूरुविस्पंदः समजायत ।
नानाकष्टप्रदस्तात सर्वथाऽशुभसूचकः ।३।
भूकंपः समभूत्तत्र दक्षयागस्थले तदा ।
दक्षोऽपश्यच्च मध्याह्ने नक्षत्राण्यद्भुतानि च ।४।
दिशश्चासन्सुमलिनाः कर्बुरोऽभूद्दिवाकरः न ।
परिवेषसहस्रेण संक्रांतश्च भयङ्करः ।५।
नक्षत्राणि पतन्ति स्म विद्युदग्निप्रभाणि च ।
नक्षत्राणामभूद्वक्रा गतिश्चाधोमुखी तदा ।६।

गृध्रा दक्षशिरःस्पृष्टाः समुद्भूता सहस्रशः ।
आसीवगृध्रपक्षच्छायः सच्छायो यागमण्डपः ।७

ब्रह्माजी ने कहा—जब इस प्रकार गणों को साथ लेकर वीरभद्र ने गमन किया, तब दक्ष ने देवताओं सहित उसके लक्षण देखे ।१। हे नारद ! वीरभद्र के गमन समय में यज्ञ के विध्वंस होने के सूचक तीन उत्पात हुए ।२। दक्ष का वाम नेत्र, बाहू, ऊरु आदि अङ्ग फड़कने लगे तथा अन्य अनेक कष्टदायक उत्पात दिखाई दिए ।३। यज्ञ की भूमि कम्पायमान हो उठी, मध्याह्न में ही नक्षत्र दिखाई देने लगे ।४। दिशायें मलीन होगईं सूर्य में काले धब्बे दिखाई पड़ने लगे, अन्य सैकड़ों भयङ्कर अशकुन हुए ।५। बिजली और अग्नि के समान तारे गिरने लगे, नक्षत्रों की गति टेढ़ी तथा अधोमुखी होगई ।६। दक्ष के शिर को स्पर्श करते हुए सैकड़ों गृद्ध उड़ने लगे; उनकी छाया से यज्ञ मण्डप ढक गया ।७।

ववाशिरे यागभूमौ क्रोष्टारो नेत्रकस्तदा ।
उल्कावृष्टिरभूत्तत्र श्वेतवृश्चिकसंभवा ।८
खरा वाता ववुस्तत्र पांशुवृष्टिसमन्विता ।
शलभाश्च समुद्भूता विवर्तानिलकंपिताः ।९
रीतैश्च पवनैरूर्ध्वं स दक्षाध्वरमण्डपः ।
देवान्वितेन दक्षेण यः कृतो नूतनोऽद्भुतः ।१०
वेमुर्दक्षादयः सर्वे तदा शोणितमद्भुतम् ।
वेमुश्च मांसखंडानि सशल्यानिमुहुर्मुहुः ।११
सकंपाश्च वभूवुस्ते दीपा वातहता इव ।
दुःखिताश्चा भवन्सर्वे शस्त्र धाराहता इव ।१२
तदा निनादजातानि वाष्पवर्षाणि तत्क्षणे ।
प्रातस्तुषारवर्षीणि पद्मानीव वनान्तरे ।१३
दक्षाद्यक्षीणि जातानि ह्यकस्माद्विशदान्यपि ।
निशायां कमलाश्चैव कुमुदानीव सङ्गवे ।१४

गीदड़ और नेत्रक पक्षी शब्द करने लगे, श्वेत वृश्चकों के साथ उल्कापात होने लगा ।८। पांशुवृष्टि के साथ तीखी वायु चल पड़ी, सब ओर से

शलभ प्रकट हो गए तथा आवर्तकी वायु अत्यन्त वेग से चलने लगा ।९। दक्ष का मण्डप रीति वाली वायु से ही उड़ने लगा, दक्ष यज्ञ में यह बात दैववश अत्यन्त अद्‌भुत और नवीन हुई ।१०। दक्षादि सब रक्तवमन करने लगे तथा शल्य सहित माँस के टुकड़े मुख के द्वारा गिरने लगे ।११। वायु के कारण सब दीपक काँपने लगे तथा सभी जीव शस्त्र की धार से आहत हुए के समान दु खी होगए ।१२। उस बड़े शब्द से आंसुओं की वर्षा होने लगी, जैसे प्रातः-कालीन ओस से कमल व्याप्त हों, सभी के मुख ऐसे हो रहे थे ।१३। जैसे रात्रि में कुमुद विशद हो जाते हैं वैसे ही दक्ष आदि के नेत्र अकस्मात् बड़े हो गए ।१४।

असृग्ववर्ष देवश्च तिमिरेणावृता दिशः ।
दिग्दाहोऽभूद्विशेषेण त्रासयन् सकलाञ्जनान् ।१५।
एवंविधान्यरिष्टानि ददृशुर्विबुधादयः ।
भयमापेदिरेऽत्यतं मुने विष्णवादिकास्तदा ।१६।
भुवि ते मूर्च्छिताः पेतुर्हा हताः स्म इतीरयन् ।
तरवस्तीरसजाता नदीवेगहता इव ।१७।
पतित्वा ते स्थिता भूमौ क्रूराः सर्पा हता इव ।
कंदुका इव ते भूयः पतिताः पुनरुत्थिता ।१८।
ततस्ते तापसंतप्ता रुरुदुः कुररी इव ।
रोदनध्वनिसंक्रांतोक्तिप्रत्युक्तिका इव ।१९।
सवैकुण्ठास्तत सर्व तदा कुण्ठितशक्तयः ।
स्वस्वोपकंठमाकंठं लुलुठुः कमठा इव ।२०।
एतस्मिन्नन्तरे तत्र संजाता चाशरीरवाक् ।
श्रावयत्यखिलान् देवान्दक्ष चैव विशेषतः ।२१।

आकाश से लोहित वर्षा होने लगी, दिशाएँ अन्धकार से भर गयीं, सब प्राणियों के लिए दुःखदायी दिग्दाह होने लगा ।१५। हे मुने ! इस प्रकार देवताओं ने बहुत से उत्पात देखे, विष्णु आदि को भी बड़ा भय प्रतीत हुआ ।१६। 'हाय, हम मरे' कहते हुए वे वैसे ही गिर पड़े जैसे

नदी के वेग से तट के वृक्ष गिर जाते हैं ।१७। क्रूर सर्प द्वारा डसे हुए के समान वे पृथिवी पर गिर गये तथा गेंद के समान उठते और पुनः गिर पड़ते थे ।१८। फिर वह ताप संतप्त होकर कुररी के समान रोने लगे और उक्ति तथा प्रत्युक्ति करने लगे ।१६। विष्णु सहित सभी की शक्ति क्षीण होगई और वे कमल के समान अपने-अपने स्थानों के लिए लौट पड़े ।२०। तभी वहाँ आकाशवाणी हुई, उसे सभी देवताओं ने और विशेष कर दक्ष ने भी सुना ।२१।

धिग् जन्म तव दक्षाद्य महामूढोऽसि पापधीः ।
भविष्यति महद्दुःखमनिवार्यं हरोद्भवम् ।२२।
हाहापि नीऽत्र ये मूढास्तव देवादयः स्थिताः ।
तेषामपि महादुःखं भविष्यति न संशयः ।२३।
तच्छ्रुत्वाकाऽऽशवचनं दृष्ट्वारिष्टानि तानि च ।
दक्षः प्रापद्भयं चाति परे देवादयोऽपि ह ।२४।
वेपमानस्तदा दक्षो विकलश्चाति चेतसि ।
अगच्छच्छरणं विष्णोः स्वप्रभोरिंदिरापतेः ।२५।
सुप्रणम्य भयाविष्टः संस्तूय च विचेतनः ।
अवोचद्देवदेवं तं विष्णुं स्वजनवत्सलम् ।२६।

आकाशवाणी ने कहा—हे दक्ष ! तुम अत्यन्त पापी और मूढ़ को धिक्कार है । शिवजी द्वारा तुम्हें दुःख प्राप्ति अवश्य होगी ।२२। यहाँ जितने देवता उपस्थित हैं, वे सब भी महा दुःख प्राप्त करेंगे ।२३। ब्रह्मा-जी ने कहा—ऐसी आकाशवाणी सुनकर और उत्पात देखकर दक्ष तथा देवताओं ने बड़ा दुःख माना ।२४। दक्ष अत्यन्त कम्पित और व्याकुल हुआ अपने स्वामी नारायण की शरण में गया ।२५। प्रणाम कर स्तुति की तथा भय से अचेत होता हुआ उनसे बोला ।२६।

विष्णु द्वारा शिव की सामर्थ्य वर्णन

देवदेव हरे विष्णो दीनबन्धो कृपानिधे ।
मम रक्षा विधातव्या भवता साध्वरस्य च ।१।
रक्षकस्त्वं मखस्यैव मखकर्मा मखात्मकः ।

कृपा विधेया यज्ञस्य भङ्गो भवतु न प्रभो ।२।
इत्थं बहुविधा दक्षः कृत्वा विज्ञप्तिमादरात् ।
पपात पादयोस्तस्य भयव्याकुलमानसः ।३।
उत्थाप्य तं ततो विष्णुर्दक्षं विक्लिन्नमानसम् ।
श्रुत्वा च तस्य तद्वाक्यं कुमतेरस्मरच्छिवम् ।४।
स्मृत्वा शिवं महेशानं स्वप्रभुं परमेश्वरम् ।
अवदच्छिवतत्त्वज्ञो दक्षं सम्बोधयन्हरिः ।५।
शृणु दक्ष प्रवक्ष्यामि तत्त्वतः शृणु मे वचः ।
सर्वथा ते हितकरं महामन्त्रं सुखप्रदम् ।६।
अवज्ञा हि कृता दक्ष त्वया तत्वमजानता ।
सकलाधीश्वरस्यैव शंकरस्य परात्मनः ।७।

दक्ष ने कहा—हे देवदेव ! हे दीनबन्धो ! हे विष्णो ! आप कृपा के सिन्धु हैं, जैसे भी हो सके, इस यज्ञ में मेरी रक्षा करें ।१। आप यज्ञ-कर्म वाले, यज्ञ-रक्षक तथा साक्षात् याज्ञात्मा हैं, मेरा यज्ञ भङ्ग न हो, ऐसी कृपा कीजिये ।२। ब्रह्माजी ने कहा कि दक्ष ने इस प्रकार बहुत भांति प्रार्थना की और भय से व्याकुल होकर वह उनके चरणों में गिर पड़ा ।३। विष्णुजी ने उस व्याकुल चित्त दक्ष को उठाया और उसकी बात सुनकर उन्होंने शिवजी का स्मरण किया ।४। अपने प्रभु भगवान् शंकर को स्मरण कर, शिवतत्व के ज्ञाता नारायण बोले—हे दक्ष ! तुम मेरी बात सुनो ! मैं तुम्हारे लिए हितकारी महामन्त्र कहता हूँ ।६। तुमने सर्वेश्वर शंकर का तत्व न जानकर उनका निरादर किया है ।७।

ईश्वरावज्ञया सर्वं कार्यं भवति सर्वथा ।
विफलं केवलं नैव विपत्तिश्च पदे पदे ।८।
अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूजनीयो न पूज्यते ।
त्रीणि तत्र भविष्यन्ति दारिद्र्यं मरणं भयम् ।९।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन माननीयो वृषध्वजः ।
अमानितान्महेशाच्च महद्भयमुपस्थितम् ।१०।

अद्यापि न व्ययं सर्वे प्रभवः प्रभवामहे ।
भवतो दुर्नयेनैव मया सत्यमुदीर्य्यते ।११
विष्णोस्तद्वचनं श्रुत्वा दक्षश्चितापरोऽभवत् ।
विवर्णवदनो भूत्वा तूष्णीमासीद्भुवि स्थितः ।१२।
एतस्मिन्नन्तरे वीरभद्रः सैन्यसमन्वितः ।
अगच्छद्दध्वरं रुद्रप्रेरितो गणनायकः ।१३।
पृष्टे केचित्समायाता गगने केचिदागताः ।
दिशश्च विदिशः सर्वे समावृत्य तथाऽपरे ।१४।

ईश्वर की अवज्ञा करने वाले को केवल कार्य में असफलता नहीं, पद-पद में विपत्ति उठानी पड़ती है ।८। जहाँ अपूजनीयों का पूजन और पूजनीयों का निरादर होता है, वहाँ दारिद्रय, मृत्यु और भय तीनों की प्राप्ति होती है ।९। भगवान् शिवजी सब प्रकार मान्य हैं, उनका तिरस्कार करने से ही इस घोर भय की तुम्हें प्राप्ति हुई है ।१०। तुम्हारी दुर्नीति के कारण ही अब हम सभी का प्रभाव न रहेगा, यह बात सत्य समझो ।११। ब्रह्माजी ने कहा कि भगवान् विष्णु की बात से दक्ष अत्यन्त चिन्तित हुआ और व्याकुल मन से, विवर्ण होकर मौन खड़ा रहा ।१२। इसी समय महान् सेना के सहित रुद्र द्वारा भेजा गया वीरभद्र वहाँ आ पहुँचा ।१३। कोई गण उसके पीछे से और कोई नभ-मार्ग से तथा कोई दिशा, विदिशा से वहाँ आ गये ।१४।

शर्वाज्ञया गणाः शूरा निर्भया रुद्रविक्रमाः ।
असंख्याः सिंहनादा वै कुर्वतो वीरसत्तमाः ।१५।
तेन नादेन महता नादितं भुवनत्रयम् ।
रजसा चावृतं व्योम तपसा चावृता दिशः ।१६।
सप्तद्वीपान्विता पृथ्वी चचालातिभयाकुला ।
सशैलकानना तत्र चुक्षुभुः सकलाब्धयः ।१७।
एवंभूतं च तत्सैन्य लोकक्षयकरं महत् ।
दृष्ट्वा च विस्मिताः सर्वे बभूवुरमादयः ।१८।
सैन्योद्योगमथालोक्य दक्षश्चासृङ् मुखाकुलः ।

दण्डवत्पतितो विष्णुं सकलत्रोऽभ्यभाषत् ।१६।
भवद्बलेनैव मया यज्ञः प्रारम्भितो महान् ।
सत्कर्मसिद्धये विष्णो प्रमाणं त्वं महाप्रभो ।२०।
विष्णो त्वं कर्मणां साक्षी यज्ञानां प्रतिपालकः ।
धर्मस्य वेदगर्भस्य ब्रह्मणस्त्वं महाप्रभो ।२१।
तस्माद्रक्षा विधातव्या यज्ञस्यास्य मम प्रभो ।
त्वदन्यः कः समर्थोऽस्ति यतस्त्वं सकलप्रभुः ।२२।

शिव आज्ञा से वह गण निर्भय, पराक्रमी तथा शूर थे, वे सब वीर वहाँ असंख्य सिंहनाद करने लगे उससे तीनों भुवन शब्दायमान होगए तथा आकाश धूल से और दिशाएँ अन्धकार से परिपूर्ण हो गईं ।१६। सप्तद्वीप युक्त पृथिवी भय के कारण काँपने लगी तथा वनों सहित पर्वत और समुद्र भी चलायमान हो गए ।१७। इस प्रकार उस लोक-नाशक महासेना को आया देख कर देवता आदि सभी क्षुब्ध हो उठे ।१८। सेना का उद्यम देखकर दक्ष का शीश झुक गया ओर वह भगवान् विष्णु के समक्ष दण्ड के समान गिरता हुआ कहने लगा ।१६। दक्ष ने कहा— हे प्रभो ! मैंने आपके बल के भरोसे ही इस महान् यज्ञ का प्रारम्भ किया था और इस कार्य की सिद्धि आपकी कृपा से ही सम्भव है ।२०। हे विष्णो ! आप कर्मों के साक्षी तथा यज्ञों के पालनकर्त्ता हैं। हे प्रभो ! आप ही वेद-धर्म के अधिष्ठान स्वरूप ब्रह्म हैं ।२१। इसलिए आपको इस यज्ञ की रक्षा करनी चाहिए, क्योंकि आपके अतिरिक्त अन्य कौन इस कार्य में समर्थ हो सकता है ? ।२२।

दक्षस्य वचनं श्रुत्वा विष्णुर्दीनतरं तदा ।
अवोचद्बोधयंस्तं वै शिवतत्त्वपराङ्मुखम् ।२३।
मया रक्षा विधातव्या तव यज्ञस्य दक्ष वै ।
ख्यातो मम पणः सत्यो धर्मस्य परिपालनम् ।२४।
तत्सत्यं तु त्वयोक्तं हि किं तत्तस्य व्यतिक्रमः ।
शृणु त्वं वच्म्यहं दक्ष क्रूरबुद्धिं त्यजाधुना ।२५।
नैमिषेऽनिमिषक्षेत्रे यज्ज्ञायं वृत्तमद्भुतम् ।

तत्किं न स्मर्यते दक्ष विस्मृतं किं कुबुद्धिना ।२६।
रुद्रकोपाच्च को ह्यत्र समर्थो रक्षणे तव ।
न यस्याभिमतं दक्ष यस्त्वां रक्षति दुर्मतिः ।२७।
किं कर्म किमकर्मेति तन्न पश्यति दुर्मतिः ।
समर्थं केवलं कर्म न भविष्यति सर्वदा ।२८।

ब्रह्माजी ने कहा—दक्ष के वचन सुनकर विष्णुजी सन्तुष्ट होगए तथा दक्ष को शिवतत्व से पराङ्मुख समझते हुए कहने लगे ।२३। विष्णु जी ने कहा—हे दक्ष ! धर्म का पालन मेरा कर्त्तव्य है, इसलिए मैं तुम्हारे यज्ञ की रक्षा करूँगा ।२४। तुमने सत्य कहा है, परन्तु तुम अब अपनी क्रूर बुद्धि को छोड़ दो इसी में कल्याण है ।२५। हे दक्ष ! नैमिषारण्य में जो घटना हुई थी, क्या वह तुम्हें याद नहीं है ? क्रूर बुद्धि से तुम उसे भुला बैठे हो ।२६। हे दक्ष ! तुम्हारी रक्षा करना भी सुमति नहीं है, रुद्र के कोप से तुम्हारी रक्षा करने में कौन समर्थ होगा ।२७। हे दुर्बुद्धि वाले ! तुम कर्म-अकर्म को नहीं देखते हो, परन्तु सब बातों में ही कर्म की सफलता नहीं हो सकती ।२८।

स्वकर्म विद्धि तद्येन समर्थत्वेन जायते ।
न त्वन्यः कर्मणो दाता शं भवेदीश्वरं विना ।२९।
ईश्वरस्य च यो भक्त्या शांतस्तद्गतमानसः ।
कर्मणो हि फलं तस्य प्रयच्छति तदा शिवः ।३०।
केवलं ज्ञानमाश्रित्य निरीश्वरपरा नराः ।
निरयं ते च गच्छन्ति कल्पकोटिशतानि च ।३१।
पुनः कर्ममयैः पाशैर्बद्ध्वा जन्मनि जन्मनि ।
निरयेषु प्रपच्यं ते केवलं कर्मरूपिणः ।३२।
अयं रुद्रगणाधीशो वीरभद्रोऽरिमर्दनः ।
रुद्रकोपाग्निसंभूतः समायातोऽध्वरांगणे ।३३।
अयमस्मद्विनाशार्थमागतोऽस्ति न संशयः ।
अशक्यमस्य नास्त्येव किमप्यस्तु तु वस्तुतः ।३४।
प्रज्वाल्यास्मानयं सर्वान् ध्रुवमेव महाप्रभुः ।

ततः प्रशांतहृदयो भविष्यति न संशयः ।३५

अपना कर्म वही समझो, जिसमें सामर्थ्य हो, कर्म का फल देने में समर्थ शिव के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है ।२९। शान्त चित्त से भक्ति पूर्वक ईश्वर में मन लगाने वाले को ही शिवजी कर्म का फल प्रदान करते हैं ।३०। जो मनुष्य ईश्वर को नहीं मानते और केवल ज्ञान के आश्रय से ही बढ़ने की इच्छा करते हैं, वे सैकड़ों करोड़ वर्षों तक नरक में पड़ते हैं ।३१। फिर जन्म जन्मान्तर रूप कर्म के फन्दा में बँध कर कर्म रूपी नरक को बारम्बार प्राप्त होते हैं ।३२। यह शत्रुओं का नाश करने वाला वीरभद्र रुद्रगणों का अधीश्वर है तथा रुद्र की क्रोधाग्नि से उत्पन्न होकर ही यहाँ आया है ।३३। इसमें सन्देह नहीं कि यह हमारे विनाशार्थ ही यहाँ आया है, इसको शान्त करना यथार्थ में तो क्या, कल्पना में भी सम्भव नहीं है ।३४। यह हम सबको इस यज्ञ में भस्म करके फिर शांत होगा, इसमें संशय नहीं है ।३५।

श्रीमहादेवशपथं समुल्लंघ्य भ्रमान्मया ।
यतः स्थितं ततः प्राप्यं मया दुःखं त्वया सह ।३६
शक्तिर्मम तु नास्त्येय दक्षाद्य तन्निवारणे ।
शपथोल्लंभनादेव शिवद्रोही यतोऽस्म्यहम् ।३७
कालत्रयेऽपि न यतो महेशद्रोहिणां सुखम् ।
ततोऽवश्यं मया प्राप्तं दुःखमद्य त्वया सह ।३८
सुदर्शनाभिधं चक्रमेतस्मिन्न लगिष्यति ।
शैवं चक्रमिदं यस्मादशैवलयकारणम् ।३९
विनापि वीरभद्रेण नामैतच्चक्रमैश्वरम् ।
हत्वा गमिष्यत्यधुना सत्वरं हरसन्निधौ ।४०
शैव शपथमुल्लंघ्य स्थितं मां चक्रमीदृशम् ।
असंहत्यैव सहसा कृपयैव स्थिरं परम् ।४१
अतः परमिद चक्रमपि न स्थास्यति ध्रुवम् ।
गमिष्यत्यधुना शीघ्रं ज्वालमालासमाकुलम् ।४२

भ्रमवश मैं शिवजी की शपथ का उल्लंघन कर यहाँ ठहरा उसका

परिणाम तुम्हारे सहित प्रत्यक्ष ही प्राप्त है ।३६। हे दक्ष ! इस उत्पात को शान्त कहना मेरी सामर्थ्य से बाहर है, शपथ का उल्लघन करने के कारण मैं भी शिवद्रोही हो गया ।३७। शिवद्रोही को त्रिकाल में भी सुख की प्राप्ति नहीं होती, तुम्हारे इसी दुष्कर्म के कारण मुझे भी दुःख मिला है ।३८। इस पर सुदर्शन चक्र भी प्रहार करने में समर्थ नहीं है, क्योंकि यह शैव्य-चक्र अशैव्यों पर ही प्रहार करता है ।३९। यदि इस चक्र को छोड़ा गया तो यह वीरभद्र पर प्रहार किये बिना ही शङ्कर के पास पहुँच जायगा ।४०। शिवजी की शपथ का उल्लंघन करने पर भी यह चक्र मेरे पास स्थित है, इसे शिवजी की परम कृपा ही समझनी चाहिए ।४१। अन्यथा यह चक्र किसी प्रकार भी नहीं ठहर सकता और ज्वालामुखी से व्याकुल होकर तुरन्त ही यहाँ से चला जायगा ।४२।

वीरभद्रः पूजितोऽपि शीघ्रमस्माभिरादरात् ।
महाक्रोधसमाक्रांतो नास्मान् संरक्षयिष्यति ।४३।
अकांडप्रलयोऽस्माकमागतोऽद्य हि हहा ।
हा हा वत तवेदानीं नाशोऽस्माकामुपस्थितः ।४४।
शरण्योऽस्माकमधुना नास्त्येव हि जगत्त्रये ।
शंकरद्रोहिणो लोके कः शरण्यो भविष्यति ।४५।
तनुनाशेऽपि संप्राप्यास्तैश्चापि यमयातनाः ।
स नैव शक्यते सोढुं बहुदुःखप्रदायिनीः ।४६।
शिवद्रोहिणमालोक्य दृष्टदन्तो यमः स्वयम् ।
तप्ततैलकटाहेषु पातयत्येव नान्यथा ।४७।
गन्तुमेवाहमुद्युक्तं सर्वथा शपथोत्तरम् ।
तथापि न गतः शीघ्रं दुष्टसंसर्गपापतः ।४८।
यद्द्य क्रियतेऽस्माभिः पलायनमितस्तदा ।
शार्वो ना कर्षकः शस्त्रैरस्मानाकर्षयिष्यति ।४९।

यदि हम यहाँ आदरपूर्वक वीरभद्र का पूजन करें तो भी भगवान् शंकर के क्रोधित होने के कारण यह हमारी रक्षा किसी प्रकार न कर